संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

# ऋषि प्रसाद

हिन्दी

वर्ष : ८
अंक : ६५
मई १९९८
रु. ६/-

भगवान
नृसिंह जयंती
९ मई, १९९८

जाको राखै साँईयाँ मार सकै नहीं कोय।
बाल न बाँका करि सकै चाहे जग वैरि होय॥

# संकल्प का सामर्थ्य

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

धर्म के रहस्य को, ऋषियों के प्रसाद को वही समझ सकता है जिसके पास शुद्ध हृदय हो। जैसे टी. वी. या रेडियो के 'वेव्ज' को समझना हो तो टी. वी. या रेडियो की जरूरत पड़ती है, ऐसे ही धर्म के, शास्त्र के, सद्गुरुओं के ज्ञान के रहस्य को समझना हो तो शुद्ध अंतःकरण की जरूरत पड़ती है।

कोई कहता है कि : 'हम धर्म को नहीं मानते, सत्संग को नहीं मानते, मंत्रों को नहीं मानते...' भाई ! तुम शुद्ध हृदय तो लेकर आओ, श्रद्धालु दिल लेकर तो आओ, फिर देखो कि सत्संग में तुम्हें क्या नहीं मिलता है ! ध्यान से तुम्हें क्या नहीं मिलता है !

*जब हम संतों के श्रीचरणों में प्रणाम करते हैं तब उनके श्रीचरणों से बरसते हुए शुभ संकल्पों को हमारा मस्तिष्क ग्रहण करता है । उनके करकमलों से बरसते हुए शुभ-संकल्पों का हमें लाभ मिलता है जिससे हमारी उन्नति सहज ही होने लगती है ।*

आपके मन में अथाह सामर्थ्य है। तुम जैसे संकल्प या विचार करते हो वैसा ही वातावरण निर्मित होता है । जो इस रहस्य को जानता है, वह अपने संकल्प के अनुसार किसीसे भी कार्य करवा सकता है ।

रशिया में एक प्रयोग हुआ :

एक व्यक्ति ने अपनी जगह पर बैठे-बैठे वहाँसे हजार मील दूर स्थित अपने मित्र को अपने संकल्प के बल से केवल तीन ही मिनट में सुला दिया !

प्रयोग के लिए दस कुर्सियों पर दस आदमियों को बैठाया गया। दोनों ही जगहों पर फोन की व्यवस्था थी। फोन के द्वारा प्रयोगकर्त्ता ने पूछा कि : ''दस आदमियों में से मैं किसको सुला दूँ ?'' जवाब मिला कि : ''तीन नंबर की कुर्सी पर जो बैठा है उसका नाम हम नहीं बतायेंगे किन्तु तुम उसे सुलाकर दिखाओ।''

व्यक्ति ने अपना प्रयोग शुरू किया और तीन मिनट के भीतर तीन नंबर की कुर्सीवाला व्यक्ति सो गया।

फोन पर कहा गया कि : ''तीन नंबर की कुर्सीवाला व्यक्ति सो गया है। किन्तु हो सकता है कि वह थका हुआ हो और उसे नींद की जरूरत हो। अब यदि तुम अपने संकल्प के बल से उसे अभी जगा सको तो हम मानेंगे।''

व्यक्ति ने पुनः अपने संकल्प का प्रयोग किया। चार मिनट के अंदर ही वह हजार मील दूर स्थित आदमी जग गया। जब उससे पूछा गया : ''कैसे तुम सो गये थे ?'' तब उसने कहा :

''मेरे लिए सोने की कोई गुंजाईश नहीं थी, मुझे थकान भी नहीं थी लेकिन मुझे कुछ ऐसा होने लगा कि 'मैं सो जाऊँ... सो जाऊँ...' मानो, मेरी अंतरात्मा मुझसे कह रही थी, कोई अदृथ्य आंदोलन मुझसे कह रहे थे : 'सो जाओ... सो जाओ...' तब मैं तो सो गया और गहरी नींद में चला गया। फिर एकाएक मुझे अहसास होने लगा कि कोई कह रहा है : 'उठो... उठो... जल्दी करो। उठो... उठो।' मैं उठ गया।''

यह प्रयोग उस संकल्पवान व्यक्ति ने किया और सफल हुआ। ऐसी बात नहीं है कि कोई और इसे नहीं कर सकता है। आप करना चाहो तो आप भी सफल हो सकते हो। इसके लिए आपको एकाग्र होना पड़ेगा, संकल्प-सामर्थ्य लाना पड़ेगा।

जो माताएँ इस रहस्य को जानती हैं वे अपनी इच्छानुसार अपने बालक का विकास करने में सफल

# ऋषि प्रसाद

वर्ष : ८
अंक : ६५
९ मई १९९८

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

**सदस्यता शुल्क**
**भारत, नेपाल व भूटान में**
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

**विदेशों में**
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
**'ऋषि प्रसाद'**
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

## *प्रस्तुत है...*



**पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग YES चैनल पर रोज सुबह ८-३० से ९. दोपहर १-३० से २.**

**अब आश्रम विषयक जानकारी Internet पर उपलब्ध है : www.ashram.org**

*'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।*

# बुद्धि : परमात्मप्राप्ति में सहायक

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

कठोपनिषद् में आता है :

**आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।**
**बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च॥**
**इन्द्रियाणि हयान्याहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।**
**आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः॥**

'तू आत्मा को रथी जान, शरीर को रथ समझ, बुद्धि को सारथि जान और मन को लगाम समझ। विवेकी पुरुष इन्द्रियों को घोड़े बतलाते हैं तथा उनके घोड़ेरूप से कल्पित किये जाने पर विषयों को उनके मार्ग बतलाते हैं और शरीर, इन्द्रिय एवं मन से युक्त जीवात्मा को भोक्ता कहते हैं।' **(कठोपनिषद् : १.२. ३-४)**

इस प्रकार ऋषियों ने इन्द्रियों को घोड़े की, मन को लगाम की, जीव को रथी की, शरीर को रथ की एवं बुद्धि को सारथि की उपमा देते हुए कहा है कि अगर सारथिरूपी बुद्धि सर्वदा अविवेकी एवं असंयत चित्त से युक्त होती है तो उसके अधीन इन्द्रियाँ उसी प्रकार नहीं रहती जैसे सारथि के अधीन दुष्ट घोड़े। परंतु जो बुद्धिरूपी सारथि कुशल और सर्वदा समाहित चित्त से युक्त होता है उसके अधीन इन्द्रियाँ उसी प्रकार रहती हैं जैसे सारथि के अधीन अच्छे घोड़े।

**यस्त्वविज्ञानवान्भवत्ययुक्तेन मनसा सदा।**
**तस्येन्द्रियाण्यवश्यानि दुष्टाश्वा इव सारथेः॥**
**यस्तु विज्ञानवान्भवति युक्तेन मनसा सदा।**
**तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथेः॥**
**(कठोपनिषद् :१.३.५-६)**

सारथि (बुद्धि) में चार गुण होने चाहिए :

१. स्वामी (जीव) के पूर्ण हित का ध्यान
२. मार्ग का ज्ञान
३. मंजिल (लक्ष्य) का ज्ञान
४. लगाम ठीक से पकड़ने का उत्साह

ये चार गुण जिस सारथि में होते हैं, उसीका रथ ठीक जगह पर पहुँचता है किन्तु जिस बुद्धिरूपी सारथि में ये चार गुण नहीं होते उसका रथ चलते-चलते गिर पड़ता है। सारथि मलहम-पट्टी करवाकर चढ़ता है, फिर रथ गिर पड़ता है। ऐसा करते-करते शरीररूपी रथ बदलते ही रहते हैं।

***यदि बुद्धि में सत्त्वगुण है, अच्छे संस्कार हैं तो वह मन को परमात्मा की तरफ मोड़ देती है जिसके फलस्वरूप इन्द्रियाँ भी उसी ओर क्रियाशील होती हैं। अगर बुद्धि में रजस्-तमस् है तो वह मन को विषय-विकाररूपी गड्ढे में गिरा देती है। फलस्वरूप इन्द्रियाँ भी उन्हें भोगने में रत हो जाती हैं।***

उपनिषद् में बताया गया यह दृष्टांत आत्मज्ञान के जिज्ञासु के लिए सचमुच ठीक लागू पड़ता है कि इन्द्रियाँ घोड़े, मन लगाम, जीव रथी और बुद्धि सारथि है। बुद्धिरूपी सारथि जीवरूपी रथी को परमात्म-प्राप्तिरूपी मंजिल तक तो पहुँचा देती है लेकिन उस मंजिल में, उस महल में न तो इन्द्रियरूपी घोड़े ही जा सकते हैं न मनरूपी लगाम। बुद्धिरूपी सारथि भी केवल महल तक छोड़ने आ सकता है, अंदर प्रवेश नहीं कर पाता।

जैसे रथ महल के बाहर द्वार पर ही खड़ा रह जाता है, घोड़े महल के अंदर के दरवाजे के पास पेड़ के नीचे बाँधे जा सकते हैं और सारथि केवल महल के द्वार तक 'जी हजूर!' कर सकता है। रथी जब भीतर प्रवेश करता है तब सारथि वापस लौट जाता है।

सारथि बाहर से महल का वर्णन कर सकता है

कि 'रथ पहुँच गया अपने महल में। महल ऐसा था... वैसा था...' लेकिन महल के भीतर क्या था ? इसका वर्णन वह नहीं कर सकता है। ऐसे ही इन्द्रियाँ मन में, मन बुद्धि में और बुद्धि उस रथी को परमात्मा तक पहुँचाने के लिए आती है लेकिन जब वह रथी (जीव) परमात्मा में प्रविष्ट होता है तो बुद्धि वहाँ से लौट आती है, बुद्धि वहाँ प्रविष्ट नहीं हो पाती है।

**यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।**
**आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान न बिभेति कदाचनेति।**

'जहाँसे मन के सहित वाणी उसे न पाकर लौट आती है उस ब्रह्मानंद को जाननेवाला पुरुष कभी भय को प्राप्त नहीं होता।' **(तैत्तीरीय उपनिषद् : २.४.१)**

महल तक पहुँची हुई बुद्धि वापस लौटती है और महल के इर्दगिर्द का वर्णन करती है। महल के इर्दगिर्द का वर्णन ही पुराण बन गए। उस परमात्मदेव का वर्णन नहीं किया जा सकता।

**यह राज़ समझ में तो आता है,**
**लेकिन समझाया नहीं जाता।**

सारथि तुम्हें महल तक पहुँचा सकता है लेकिन महल के अंदर तो तुम्हें ही जाना पड़ेगा। जैसे, माँ भोजन की थाली सजाकर, संवारकर तुम्हारे आगे रख सकती है, ग्रास भरकर तुम्हारे मुँह में डाल सकती है लेकिन ग्रास को चबाकर गले के नीचे उतारना यह तुम्हारा काम हो जाता है।

जिसका बुद्धिरूपी सारथि बढ़िया होता है वह जीवरूपी रथी ठीक तरह से अपने परमात्मारूपी महल तक पहुँच जाता है किन्तु सारथि तभी लक्ष्य तक पहुँचा सकता है जब उसके पास ये चार गुण हों : वफादारी, मार्ग की जानकारी, गंतव्य की जानकारी और लगाम पकड़ने की कुशलता। यदि सारथि में ये चारों गुण न हों तो काम नहीं चलेगा। वह लक्ष्य का जानकार हो, मार्ग का भी जानकार हो किन्तु मनरूपी लगाम को ठीक से न पकड़ सकता हो तो ? लगाम पकड़ सकता हो, मार्ग एवं लक्ष्य का भी जानकार हो किन्तु स्वामी के प्रति वफादार न हो तो काम नहीं बन सकता। अतः सारथि इन चारों ही गुणों से युक्त होना चाहिए। तभी वह रथी को अपने गन्तव्य स्थान तक सुचारु रूप से पहुँचा सकता है।

अब हम इसे दूसरे ढंग से समझें : संसार का सार शरीर है। शरीर का सार इन्द्रियाँ हैं। इन्द्रियों का सार मन है और मन का सार है बुद्धि।

अगर शरीर में इन्द्रियाँ न हों तो शरीर टिक नहीं सकता। आँख, नाक, कान, जीभ और त्वचा- ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं एवं हाथ-पैर आदि पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं। इनमें अगर मन की वृत्ति नहीं जुड़ती तो ये भी कुछ नहीं कर सकतीं और इस मन को सत्ता देनेवाली है बुद्धि।

मान लो, आँख ने दिखाया आदमी। मन सोचेगा कि यह सज्जन है कि साधु है कि ठग है ? बुद्धि ने कह दिया कि 'साधु है' तो मन उसके पास जाने का संकल्प करेगा और हाथ-पैर भी उस दिशा में जाने के लिए क्रियाशील हो उठेंगे। बुद्धि जैसा निर्णय देती है, ऐसा ही मनीराम (मन) संकल्प-विकल्प करता है और इन्द्रियाँ भी उसी प्रकार की चेष्टा करती हैं।

यदि बुद्धि में सत्त्वगुण है, अच्छे संस्कार हैं तो वह मन को परमात्मा की तरफ मोड़ देती है जिसके फलस्वरूप इन्द्रियाँ भी उसी ओर क्रियाशील होती हैं। अगर बुद्धि में रजस्-तमस् है तो वह मन को विषय-विकाररूपी गड्ढे में गिरा देती है। फलस्वरूप इन्द्रियाँ भी उन्हें भोगने में रत हो जाती हैं और जीव परमात्मा से विमुख हो जाता है। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह बुद्धि को शुद्ध रखे।

पैर खराब होते हैं तो लोग तुरंत धोते हैं। कपड़ा खराब होता है तो तुरंत बदलते हैं। रसोईघर खराब होता है तो तुरंत पोंछा लगाते हैं। दीवानखाना खराब होता है तो साफ कर देते हैं। यहाँ तक कि बाथरूम को

(शेष पृष्ठ २० पर)

*बुद्धि सजती है विवेक से। वे काम कभी मत करो कि जिनमें विवेक का उपयोग न होता हो। वे भावनाएँ कभी मत करो कि जिनमें विवेक न हो और वे भोग कभी मत भोगो कि जिनमें विवेक की प्रधानता न हो।'*

# आत्म प्रसाद

## असली पारसमणि

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

कलकत्ता की ओर से एक व्यक्ति चलकर वृंदावन में गोसाईंजी के पास आया एवं उनसे कहने लगा :

''बाबाजी ! मैंने एक स्वप्न देखा है। शिवजी ने मुझे स्वप्न में कहा है कि 'अगर तुझे दरिद्रता मिटाना है तो तू वृंदावन में गोसाईंजी के पास जा। वे तुझे पारसमणि दे देंगे। उससे सोना बनाकर तू धनवान् बन ज़ाना।' महाराज ! इसीलिए मैं आपके पास आया हूँ।''

**उसे पता चला कि बिना धन के भी वह धनवान था, बिना सत्ता के भी वह परम सत्तावान था, बिना पदार्थ के भी वह आनंदवान था- ऐसा पारस, ऐसा आत्मखजाना कहीं दूर नहीं, उसके अपने ही पास था।**

गोसाईंजी : ''भैया ! एक बार मैं जंगल गया था, तब वहाँ मुझे एक चमकता हुआ पत्थर दिखाई दिया था। उसे मैंने बालू से ढँक दिया था। अमुक पेड़ की दाईं ओर से पंद्रह कदम चलने पर अमुक जगह पर से बालू हटाना, तुझे वह मिल जायेगा।'' यह कहकर उसे स्थान बता दिया।

**जिसके स्पर्श से लोहा सोना बन जाता है ऐसे पारस तक को आपने ठुकरा दिया तो आपके पास उससे भी कीमती कौन-सा पारस है ? कृपानाथ ! वह पारस पाने की युक्ति बताने की कृपा कीजिए।**

संकेत अनुसार वह व्यक्ति जंगल में निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचा और वहाँ जाकर उसने रेती हटायी तो उसे एक चमकता हुआ पत्थर मिल गया। उसने उसे लोहे की एक कील से छुआकर देखा तो कील सोने की हो गयी। इससे उसे निश्चय हो गया कि यह पारसमणि ही है।

लेकिन वह कील सोने की हो गयी तो उसके मन में हर्ष के साथ एक प्रश्न भी उठा। वह दौड़ता हुआ गोसाईंजी के पास आया और बोला :

''बाबाजी ! वह चमकता हुआ पारसमणि तो मिल गया, उससे लोहे की कील भी सोने की हो गयी। किन्तु साथ ही एक प्रश्न भी मन में उठा कि जिसको देखकर आपने उस पर रेत डाल दी, जिसका त्याग कर दिया तो उससे भी कोई कीमती चीज आपके पास अवश्य होनी चाहिए। जिसके स्पर्श से लोहा सोना बन जाता है ऐसे पारस तक को आपने ठुकरा दिया तो आपके पास उससे भी कीमती कौन-सा पारस है ? कृपानाथ ! वह पारस पाने की युक्ति बताने की कृपा कीजिए।

इस पारस से तो स्वर्ण बनेगा तथा दरिद्रता दूर होगी किन्तु इसके साथ ही साथ अनेक जवाबदारियाँ भी बढ़ जायेंगी। चोर-डाकू पीछे पड़ जायेंगे। कर लेनेवाले परेशान करेंगे। कुटुंबी ईर्ष्या करेंगे। तनाव बढ़ेंगे, भोग-वासनाएँ बढ़ेंगी। शरीर खोखला हो जायगा। और भी न जाने कितनी मुसीबतें बढ़ेंगी। इन्हीं भोगों के कारण अति संग्रह करनेवाले लोग विक्षिप्त होते हैं। इस पारस से मेरा भी ऐसा ही हाल होगा। अब कृपानाथ ! आपके पास जो पारस है, मैं उसे पाने की युक्ति जानना चाहता हूँ।''

गोसाईंजी : ''अगर मेरा पारस जानना चाहता है तो इस पारस को यमुना में फेंक दे।''

उस बुद्धिमान तथा विवेकवान व्यक्ति ने तुरंत पारस को यमुना में फेंक दिया। फिर गोसाईंजी ने उसको सामने बिठाया एवं हरिनाम का कीर्तन करते-करते उस पर दृष्टिपात कर दिया। उसके भीतर कीं सुषुप्त शक्ति जागृत हो उठी। गोसाईंजी ने कहा :

''चमकता हुआ पारस पत्थर उन्हीं लोगों को आकर्षित करता है जिनके अंदर परमात्मा की चमक

का महत्त्व नहीं है। ईश्वर की सृष्टि की वस्तुओं को अपनी बनाकर जो अहंकार करते हैं वे भी अपने मनुष्य-जीवन की महत्ता को नहीं जानते हैं और ईश्वर की वस्तुओं को अपनी बनाने की लालसा में जो मारे-मारे फिरते हैं वे भी जीवन के रहस्य को नहीं जानते हैं।

मैंने जीवन के रहस्य को थोड़ा-थोड़ा जाना है इसीलिए पारस मुझे एक चमकता हुआ पत्थर का टुकड़ा दिखा। वास्तविक पारस, कीमती पारस तो वह चैतन्य ही है। मैं चाहता हूँ कि आप भी उसी पारस का दीदार कर लो। आप ऐसा धन पा लो कि मौत के बाद भी निर्धनता का दुर्भाग्य न रहे। ऐसा धन है आत्मज्ञान। आप उस आत्मज्ञान को पा लो ताकि पुनः किसी माता के गर्भ में उल्टे लटकना न पड़े, गर्भाग्नि में पचना न पड़े।

आप उसी दिव्य पुरुष का ध्यान कर लो, भैया ! जो पारसों का भी पारस है। उसी परमात्मा के नाम-संकीर्तन का आश्रय लेकर श्वासोश्वास को गिनते जाओ... अंतर्मुख होते जाओ... आपके सब दुःख मिट जायेंगे... सुख-दुःख आपकी ही मनोवृत्ति का परिणाम है अतः अपनी मनोवृत्तियों को मालिक में समेटते जाओ... अपने प्यारे को आपके द्वारा जो करवाना है, करवाने दो। आप केवल उसके हो जाओ, बस। वह रुलाना चाहे तो रो लो, हँसाना चाहे तो हँस लो, नचाना चाहे तो नाच लो... बस, केवल उसीकी मर्जी के अनुसार चलो, उसका नाम लेते रहो... उसका ध्यान करते रहो... फिर आपके द्वारा जो कुछ होगा वह दिव्य होगा, भव्य होगा, वह परमात्मा का प्रसाद हो जायेगा...''

*"चमकता हुआ पारस पत्थर उन्हीं लोगों को आकर्षित करता है जिनके अंदर परमात्मा की चमक का महत्त्व नहीं है। ईश्वर की सृष्टि की वस्तुओं को अपनी बनाकर जो अहंकार करते हैं वे भी अपने मनुष्य-जीवन की महत्ता को नहीं जानते हैं।"*

गोसाईंजी की कृपादृष्टि एवं अमृतवाणी से धीरे-धीरे उसकी इच्छा-वासनाएँ मिटती गयीं एवं वह भी असली पारस परमात्मस्वरूप में विश्रांति पाने में सफल हो गया। फिर उसे पता चला कि बिना धन के भी वह धनवान था, बिना सत्ता के भी वह परम सत्तावान था, बिना पदार्थ के भी वह आनंदवान था -ऐसा पारस, ऐसा आत्मखजाना कहीं दूर नहीं, उसके अपने ही पास था।

अगर आप लोग चाहो तो आप भी उस पारस का अनुभव करने में सफल हो सकते हो। केवल जरूरत है तो उसकी कीमत समझने की और उसकी महानता, आवश्यकता तो संत महापुरुष ही समझ सकते हैं। अतः सच्चे सत्पुरुषों के दर्शन, सत्संग-श्रवण एवं तदनुसार आचरण से आप भी असली पारस का अनुभव करके कृतकृत्य हो जाओ।

# भगवान का नृसिंहावतार

## [ नृसिंह जंयती : ९ मई '९८ पर विशेष ]

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

अपने भाई हिरण्याक्ष को भगवान के वराहावतार द्वारा मारा गया जानकर महा दैत्य हिरण्यकशिपु मेरुगिरि के पास जाकर भगवान शिव को प्रसन्न करने के लिए कठोर तप में संलग्न हो गया। उस महाबली दैत्य ने एक हजार दिव्य वर्षों तक केवल वायु पीकर जीवन-निर्वाह किया और भगवान शिव के पंचाक्षर मंत्र का जप करते हुए पूजन करता रहा।

तब भगवान शिव ने प्रसन्न होकर उसे वर माँगने के लिए कहा। भगवान शिव को प्रसन्न जानकर हिरण्यकशिपु ने कहा :

''भगवन्! देवता, असुर, मनुष्य, गंधर्व, नाग, राक्षस, पशु, पक्षी, मृग, सिद्ध, महात्मा, यक्ष, विद्याधर और किन्नरों से, समस्त रोगों से, सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से तथा संपूर्ण महर्षियों से भी मेरी मृत्यु न हो सके- यह वरदान दीजिए।''

भगवान शिव ने 'एवमस्तु' कहकर उसे वरदान दे दिया। भगवान शिव से वरदान पाकर वह महाबली दैत्य इन्द्र और अन्य देवताओं को जीतकर तीनों लोकों का सम्राट बन बैठा। उसने बलपूर्वक समस्त यज्ञ-भागों पर अधिकार जमा लिया। गन्धर्व, देवता, दानव, यक्ष, नाग और सिद्ध आदि सभी उसके अधीन रहने लगे।

उसने विधिपूर्वक विवाह किया और समय पाकर उसके यहाँ परम तेजस्वी एवं भगवद्भक्त प्रहलाद का जन्म हुआ।

प्रहलाद गर्भ में रहते समय भी संपूर्ण इन्द्रियों के स्वामी श्रीहरि में अनुराग रखते थे। सब अवस्थाओं और समस्त कार्यों में मन, वाणी, शरीर और क्रिया द्वारा वे देवताओं के स्वामी सनातन भगवान विष्णु के अतिरिक्त किसीको नहीं जानते थे। उनकी बुद्धि बड़ी निर्मल थी। समयानुसार उपनयन संस्कार हो जाने पर वे गुरुकुल में अध्ययन करने लगे। वेदों और नाना प्रकार के शास्त्रों का अध्ययन करके वे किसी समय अपने गुरु के साथ घर पर आये। उन्होंने पिता के पास जाकर बड़ी विनम्रता से प्रणाम किया।

हिरण्यकशिपु ने उत्तम लक्षणों से युक्त पुत्र को चरणों में पड़ा देखकर उसे उठाकर हृदय से लगा लिया एवं गोद में बैठाकर पूछा :

''बेटा प्रहलाद! तुमने दीर्घ काल तक गुरुकुल में निवास किया है। वहाँ गुरुजी ने तुम्हें जानने योग्य जो तत्त्व बतलाया हो वह मुझसे कहो।''

तब प्रहलाद ने कहा :

**श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।**
**अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥**
**इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा ।**
**क्रियते भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम् ॥**

'पिताजी! विष्णु भगवान की भक्ति के नौ भेद हैं : भगवान के गुण, लीला, नाम आदि का श्रवण, उन्हींका कीर्तन, उनके रूप-नाम आदि का स्मरण, उनके चरणों की सेवा, पूजा-अर्चना, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन। यदि भगवान के प्रति समर्पण भाव से यह नौ प्रकार की भक्ति की जाये तो मैं उसीको उत्तम अध्ययन समझता हूँ।'

**(श्रीमद् भागवत : ७. ५. २३-२४)**

प्रहलाद के मुख से इस प्रकार विष्णु की स्तुति सुनकर दैत्यराज हिरण्यकशिपु को बड़ा विस्मय हुआ। उसने कुपित होकर प्रहलाद के गुरु से पूछा :

''खोटी बुद्धिवाले ब्राह्मण! तूने मेरे पुत्र को क्या सिखा दिया? मेरा पुत्र और इस प्रकार विष्णु की स्तुति करे? तूने ऐसी शिक्षा क्यों दी? यह मूर्खतापूर्ण, न करने योग्य कार्य ब्राह्मणों के ही योग्य है। ब्राह्मणाधम!

मेरे शत्रु की यह स्तुति जो कदापि सुननेयोग्य नहीं है, आज मेरे ही आगे इस बालक ने सुना दी। यह सब तेरा ही प्रसाद है।''

इतना कहते-कहते दैत्यराज हिरण्यकशिपु क्रोध के मारे अपनी सुध-बुध खो बैठा और चारों ओर देखकर दैत्यों से बोला :

''अरे, इस ब्राह्मण को मार डालो।''

आज्ञा पाते ही क्रोध में भरे हुए राक्षस आ पहुँचे और उन श्रेष्ठ ब्राह्मण के गले में रस्सी लगाकर उन्हें बाँधने लगे। ब्राह्मणों के प्रेमी प्रहलाद अपने गुरु को बँधते देख पिता से बोले :

''तात ! यह गुरुजी ने नहीं सिखाया है। मुझे तो देवाधिदेव भगवान विष्णु की ही कृपा से ऐसी शिक्षा मिली है। किसी गुरु ने मुझे इसका उपदेश नहीं दिया है। मेरे लिए तो श्रीहरि ही प्रेरक हैं। सुनने, मनन करने, बोलने तथा देखनेवाले सर्वव्यापी ईश्वर केवल श्रीविष्णु ही हैं। वे ही अविनाशी कर्त्ता हैं और वे ही सब प्राणियों पर नियंत्रण करनेवाले हैं। अतः प्रभो ! मेरे गुरु इन ब्राह्मण देवता का कोई अपराध नहीं है। इन्हें बंधन से मुक्त कर देना चाहिए।''

पुत्र की यह बात सुनकर हिरण्यकशिपु ने ब्राह्मण का बंधन खुलवा दिया और स्वयं बड़े विस्मय में पड़कर प्रहलाद से कहा :

''बेटा ! तुम ब्राह्मणों के झूठे बहकावे में आकर क्यों भ्रम में पड़ रहे हो ? कौन विष्णु है ? कैसा उसका रूप है और कहाँ वह निवास करता है ? संसार में मैं ही ईश्वर हूँ। मैं ही तीनों लोकों का स्वामी माना गया हूँ। विष्णु तो हमारे कुल का शत्रु है। उसे छोड़ो और मेरी ही पूजा करो अथवा लोकगुरु भगवान शंकर की आराधना करो जो देवताओं के अध्यक्ष, संपूर्ण ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले और परम कल्याणमय हैं। ललाट में भस्म से त्रिपुण्ड धारण करके पाशुपत मार्ग से दैत्यपूजित महादेवजी की पूजा में संलग्न रहो।''

तब पुरोहितों ने कहा :

''ठीक ऐसी ही बात है। महाभाग प्रहलाद ! तुम पिता की बात मानो। अपने कुल के शत्रु विष्णु को छोड़ो और त्रिनेत्रधारी महादेवजी की पूजा करो। महादेवजी से बढ़कर सब कुछ देनेवाला दूसरा कोई देव नहीं है। उन्हींकी कृपा से आज तुम्हारे पिता भी ईश्वर-पद पर प्रतिष्ठित हैं।''

प्रहलाद बोले : ''अहो ! भगवान की कैसी महिमा है ! उनकी माया से सारा जगत मोहित हो रहा है ! कितने आश्चर्य की बात है कि वेदान्त के विद्वान और सब लोकों में पूजित ब्राह्मण भी मदोन्मत्त होकर चपलतावश ऐसी बातें कहते हैं ! मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि नारायण ही परब्रह्म हैं। नारायण ही परम तत्त्व हैं। नारायण ही सर्वश्रेष्ठ ध्याता और नारायण ही सर्वोत्तम ध्यान हैं। संपूर्ण जगत की गति भी वे ही हैं। वे सनातन, शिव, अच्युत, जगत के धाता, विधाता और नित्य वासुदेव हैं। परम पुरुष नारायण ही यह संपूर्ण विश्व हैं और वे ही इस विश्व को जीवन प्रदान करते हैं। परम योगी महात्मा सनकादि भी जिन भगवान विष्णु का ध्यान करते हैं, ब्रह्मा, शिव तथा इन्द्र आदि देवता भी जिनकी

*''मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि नारायण ही परब्रह्म हैं। नारायण ही सर्वश्रेष्ठ ध्याता और नारायण ही सर्वोत्तम ध्यान हैं। संपूर्ण जगत की गति भी वे ही हैं। परम योगी महात्मा सनकादि भी जिन भगवान विष्णु का ध्यान करते हैं, ब्रह्मा, शिव तथा इन्द्र आदि देवता भी जिनकी आराधना में लगे रहते हैं, उन परमेश्वर का ही सदा पूजन करूँगा तथा अनायास ही श्रीविष्णु के उस परम पद को प्राप्त कर लूँगा।''*

*''पिताजी ! योगी पुरुष भक्ति के बल से उनका सर्वत्र दर्शन करते हैं। भक्ति के बिना वे कहीं भी दिखायी नहीं देते हैं। रोष और मत्सरादि के द्वारा श्रीहरि का दर्शन होना असंभव है।''*

आराधना में लगे रहते हैं, जिनकी पत्नी भगवती लक्ष्मी की कृपा-कटाक्षपूर्ण आधी दृष्टि पड़ने पर ही ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, वरुण, यम, चंद्रमा और कुबेर आदि देवता हर्ष से फूल उठते हैं, जिनके नामों का स्मरण करने मात्र से पापियों की भी तत्काल मुक्ति हो जाती है वे भगवान लक्ष्मीपति ही देवताओं की भी सदा रक्षा करते हैं। मैं लक्ष्मीसहित उन परमेश्वर का ही सदा पूजन करूँगा तथा अनायास ही श्रीविष्णु के उस परम पद को प्राप्त कर लूँगा।''

प्रहलाद के मुँह से यह सुनकर हिरण्यकशिपु अत्यंत क्रोधित होकर दैत्यों से बोला :

''अरे ! यह प्रहलाद बड़ा पापी है। यह शत्रु की पूजा में लगा है। मैं आज्ञा देता हूँ- इसे भयंकर शस्त्रों से मार डालो। जिसके बल पर यह 'श्रीहरि ही रक्षक हैं' - ऐसा कहता है उसे आज ही देखना है। उस हरि का रक्षाकार्य कितना सफल है यह अभी मालूम हो जायेगा।''

हिरण्यकशिपु की यह आज्ञा पाते ही दैत्य हथियार लेकर प्रहलाद के चारों ओर खड़े हो गये। इधर प्रहलाद भी अपने हृदय में श्रीविष्णु का ध्यान करते हुए पर्वत की तरह अचल होकर खड़े हो गये। दैत्य यौद्धा चारों ओर से उनके ऊपर शूल, तोमर, शक्ति आदि से प्रहार करने लगे किन्तु श्रीहरि का स्मरण करने के कारण उस वक्त भक्त प्रहलाद का शरीर वज्र के समान हो गया। दैत्यों के अस्त्र-शस्त्र प्रहलाद के शरीर से टकराकर टूट जाते और कमल के पत्तों की तरह छिन्न-भिन्न होकर पृथ्वी पर गिर जाते थे। दैत्य उनके शरीर में छोटा-सा भी घाव करने में समर्थ न हो सके। तब विस्मय से नीचे मुँह किये वे सभी दैत्यराज हिरण्यकशिपु के पास जाकर चुपचाप खड़े हो गये। अपने महात्मा पुत्र को इस प्रकार तनिक भी चोट पहुँचती न देखकर दैत्यराज हिरण्यकशिपु को बड़ा आश्चर्य हुआ ! उसने क्रोध से व्याकुल होकर वासुकि आदि बड़े-बड़े विषैले और भयंकर सर्पों को आज्ञा दी : ''इस प्रहलाद को काट खाओ।''

राजा का यह आदेश पाकर अत्यंत भयंकर और महाबली नाग, जिनके मुखों से आग की लपटें निकल रही थीं, प्रहलाद को काट खाने की चेष्टा करने लगे किन्तु प्रहलाद के शरीर में दाँत लगाते ही वे सर्प अपने विषों से हाथ धो बैठे। उनके दाँत टूट गये तथा हजारों गरुड़ प्रगट होकर उनके शरीर को छिन्न-भिन्न करने लगे। इससे व्याकुल होकर मुख से रक्त वमन करते हुए सभी सर्प इधर-उधर भाग गये। बड़े-बड़े सर्पों की ऐसी दुर्दशा देखकर हिरण्यकशिपु का क्रोध और भी बढ़ गया।

फिर उसने मतवाले दिग्गजों को यानी हाथियों को प्रहलाद पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। राजाज्ञा से प्रेरित होकर मदोन्मत्त दिग्गज चारों ओर से प्रहलाद को घेरकर अपने विशाल और मोटे दाँतों से उन पर प्रहार करने लगे किन्तु उनके शरीर से टक्कर लेते ही दिग्गजों के दाँत जड़-मूलसहित टूटकर पृथ्वी पर गिर पड़े। पीड़ा के कारण सभी दिग्गज इधर-उधर भाग चले।

गजराजों को भी असफल होते देखकर दैत्यराज ने एक बड़ी चिता जलाकर उसमें अपने बेटे को डाल दिया किन्तु भगवान विष्णु के प्रियतम भक्त प्रहलाद को धीर भाव से बैठे देखकर भयंकर लपटोंवाले अग्निदेव ने भी उन्हें नहीं जलाया एवं ज्वाला शांत हो गयी।

अपने बालक को आग में भी जलते न देखकर दैत्यपति के आश्चर्य की सीमा न रही ! तब उसने पुत्र को अत्यंत भयंकर विष दे दिया जो सब प्राणियों के प्राण हर लेनेवाला था किन्तु भगवान विष्णु के प्रभाव से प्रहलाद के लिए विष भी अमृत हो गया।

इस प्रकार राजा हिरण्यकशिपु ने अपने पुत्र के वध के लिए बड़े भयंकर और निर्दयतापूर्ण उपाय किये किन्तु प्रहलाद को सर्वथा अवध्य देखकर वह विस्मय से व्याकुल हो उठा एवं बोला :

''प्रहलाद ! तुमने मेरे सामने विष्णु की श्रेष्ठता का भलीभाँति वर्णन किया है। अतः तुम मुझे उनकी सर्वव्यापकता को प्रत्यक्ष दिखाओ। उनके ऐश्वर्य, शक्ति, तेज, ज्ञान, वीर्य, बल, उत्तम रूप, गुण और विभूतियों को अच्छी तरह देख लूँ तब मैं विष्णु को देवता मान सकता हूँ। इस समय संसार में तथा

देवताओं में भी मेरे बल की समानता करनेवाला कोई भी नहीं है। भगवान शकंर के वरदान से मैं सब प्राणियों के लिए अवध्य हो गया हूँ। मुझे परास्त करना किसी भी प्राणी के लिए कठिन है। यदि विष्णु मुझे अपने बल और पराक्रम से जीत लें तो ईश्वर का पद प्राप्त कर सकते हैं।''

पिता की इस बात से प्रहलाद को बड़ा विस्मय हुआ तथा वे बोले :

''पिताजी ! योगी पुरुष भक्ति के बल से उनका सर्वत्र दर्शन करते हैं। भक्ति के बिना वे कहीं भी दिखायी नहीं देते हैं। रोष और मत्सरादि के द्वारा श्रीहरि का दर्शन होना असंभव है। देवता, पशु, पक्षी, मनुष्य तथा स्थावर-जंगम समस्त छोटे-बड़े प्राणियों में वे व्याप्त हो रहे हैं।''

*"तात ! यह गुरुजी ने नहीं सिखाया है। मुझे तो देवाधिदेव भगवान विष्णु की ही कृपा से ऐसी शिक्षा मिली है। किसी गुरु ने मुझे इसका उपदेश नहीं दिया है। मेरे लिए तो श्रीहरि ही प्रेरक हैं।*

प्रहलाद के ये वचन सुनकर दैत्यराज हिरण्यकशिपु ने क्रोध से लाल-लाल आँखें करके उन्हें डाँटते हुए कहा :

''यदि विष्णु सर्वव्यापी और परम पुरुष है तो इस विषय में अधिक प्रलाप करने की आवश्यकता नहीं है। इस पर विश्वास करने के लिए कोई प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित करो।'' ऐसा कहकर दैत्य ने सहसा अपने महल के खंभे को हाथ से ठोका और पुनः कहा :

''यदि विष्णु सर्वव्यापक है तो उसे तुम इस खंभे में दिखाओ। अन्यथा झूठी बातें बनाने के कारण तुम्हारा वध कर डालूँगा।''

यों कहकर दैत्यराज ने सहसा तलवार खींच ली और क्रोधपूर्वक प्रहलाद को मार डालने के लिए उनकी छाती पर प्रहार करना चाहा। उसी समय खंभे के भीतर से बड़े जोर की आवाज सुनायी पड़ी मानो, वज्र की गर्जना के साथ आसमान फट पड़ा हो। उस महान् शब्द से दैत्यों के कान बहरे हो गये। वे जड़ से कटे हुए वृक्षों की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़े। उन पर आतंक छा गया। उन्हें ऐसा जान पड़ा मानो अभी तीनों लोकों का प्रलय हो जाएगा।

तदनंतर उस खंभे से महान् तेजस्वी विशालकाय सिंह की आकृति धारण किये श्रीहरि निकले। निकलते ही उन्होंने प्रलयकालीन मेघों के समान महा भयंकर गर्जना की। वे अनेक कोटि सूर्य और अग्नियों के समान तेज से संपन्न थे। उनका मुँह सिंह के समान था और शरीर मनुष्य के समान। दाढ़ों के कारण मुख बड़ा विकराल दिखायी देता था। लपलपाती हुई जीभ उनके उद्धत भाव की सूचना दे रही थी। उनके बालों से आग की लपटें निकल रही थीं। क्रोध से जलती हुई अंगारे जैसी लाल-लाल आँखें अलातचक्र के समान घूम रही थीं। बड़ी-बड़ी भुजाओं में सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लिए भगवान नृसिंह अनेक शाखावाले वृक्षों से युक्त मेरु पर्वत के समान जान पड़ते थे। उनके अंगों में दिव्य मालाएँ, दिव्य वस्त्र और दिव्य आभूषण शोभा पाते थे। भगवान नृसिंह को उपस्थित देखकर दैत्यराज हिरण्यकशिपु की आँखों की बरौनियाँ जल उठीं। उसका सारा शरीर व्याकुल हो गया और वह अपने को सँभाल न सकने के कारण पृथ्वी पर गिर पड़ा।

उस समय प्रहलाद ने भगवान जनार्दन को नृसिंह की आकृति में उपस्थित देखकर जय-जयकार करते हुए उनके चरणों में मस्तक झुकाया एवं उनके दिव्य अंगों पर दृष्टिपात किया। समस्त लोकों तथा समस्त देवों आदि को उनके दिव्य अंगों में पाकर एवं संपूर्ण उपनिषदों के अर्थभूत भगवान श्रीविष्णु को उपस्थित देखकर दैत्य राजकुमार प्रहलाद के नेत्रों से आनन्दाश्रु बह चले। उनका सर्वांग अश्रुजल से अभिषिक्त होने लगा और वे बारंबार श्रीहरि के चरणों में प्रणाम करने लगे।

दैत्यराज हिरण्यकशिपु नृसिंह को सामने आया देखकर क्रोधवश युद्ध के लिए तैयार हो गया। वह मृत्यु के अधीन हो रहा था। इसलिए हाथ में तलवार लेकर भगवान नृसिंह की ओर दौड़ा। इसी बीच महाबली दैत्य भी होश में आ गये और अपने-अपने

आयुध लेकर भगवान नृसिंह पर प्रहार करने लगे। दैत्यों की उस सेना को देखकर भगवान नृसिंह ने अपनी अयाल से निकलती हुई लपटों के द्वारा उसे जलाकर भस्म कर दिया। समस्त दानव उनकी जटा की आग से जलकर राख के ढेर में परिणत हो गये। प्रहलाद और उनके अनुचरों को छोड़कर दैत्य सेना में कोई भी नहीं बचा।

यह देखकर क्रोधित होकर एवं तलवार लेकर हिरण्यकशिपु भगवान नृसिंह की ओर झपटा किन्तु भगवान ने एक ही हाथ से तलवारसहित दैत्यराज को पकड़ लिया और जैसे आँधी वृक्ष की शाखा को गिरा देती है उसी प्रकार उसे पृथ्वी पर दे मारा। पृथ्वी पर पड़े उस विशालकाय दैत्य को भगवान नृसिंह ने फिर पकड़ा और अपनी गोद में रखकर उसके मुख की ओर दृष्टिपात किया। उसमें श्रीविष्णु की निंदा तथा वैष्णवभक्त से द्वेष करने का जो पाप था, वह भगवान के स्पर्शमात्र से ही जलकर भस्म हो गया। तत्पश्चात् भगवान नृसिंह ने दैत्यराज के उस विशाल शरीर को वज्र के समान कठोर और तीखे नखों से विदीर्ण कर डाला। इससे दैत्यराज का अन्तःकरण निर्मल हो गया। उसने साक्षात् भगवान का मुख देखते हुए प्राणों का परित्याग कर दिया, जिससे वह कृतकृत्य हो गया।

त्रिलोकी को अपने आतंक से आतंकित करनेवाले हिरण्यकशिपु का अंत हुआ देखकर सभी देवता अत्यंत हर्षित हुए एवं ब्रह्माजी एवं महादेवजी को आगे करके धीरे-धीरे भगवान की स्तुति करने के लिए आये। पहले तो उनके क्रोधाग्नि से उद्दीप्त मुखमंडल को देखकर सभी भयभीत हो गये किन्तु देवी लक्ष्मी द्वारा प्रसन्न किये जाने पर नृसिंहरूपधारी श्रीविष्णु ने अपना भयानक तेज समेट लिया और सुखपूर्वक दर्शन देने लगे।

तत्पश्चात् श्रीहरि ने सब देवताओं को साथ लेकर प्रहलाद को सब दैत्यों का राजा बनाया। प्रहलाद को आश्वासन देकर, देवताओं द्वारा उनका राज्याभिषेक कराकर उन्हें अभीष्ट वरदान एवं अनन्य भक्ति प्रदान की। बोलिए, नृसिंह भगवान की जय...

**(संक्षिप्त पद्मपुराण पर आधारित)**

(पृष्ठ २२ का शेष)

सूर्यदेवता एवं जलमुर्ग के रूप में आये हुए प्राणदेवता से सत्यकाम ने ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया।

गुरुदेव द्वारा निश्चित की गयी संख्या के अनुसार जब सत्यकाम एक हजार गायों को लेकर गुरुदेव के आश्रम में पहुँचा तब उसके मुख पर ब्रह्मतेज प्रकाशित हो रहा था।

सत्यकाम के चिंतारहित तेजपूर्ण मुख पर दृष्टि पड़ते ही गुरुदेव उसका स्वागत करते हुए बोले :

''हे वत्स ! तू तो ब्रह्मज्ञानी की तरह सुशोभित हो रहा है। तुझे ब्रह्मज्ञान का उपदेश किसने दिया ?''

सत्यकाम ने गुरुदेव के समक्ष सारी घटना बता दी एवं हाथ् जोड़कर, मस्तक नवाकर विनम्र स्वर से बोला : ''हे गुरुदेव ! आपके जैसे आचार्य द्वारा प्राप्त होनेवाली विद्या ही श्रेष्ठ विद्या होती है। अब आप मुझे उपदेश देने की कृपा करें। मुझे ब्रह्मज्ञान से विभूषित करें।''

अपने सेवापरायण विनम्र शिष्य को हृदय से लगाते हुए एवं अंतर के आशीर्वाद से नहलाते हुए ऋषि गौतम बोले :

''वत्स ! तूने जो कुछ जाना है, वही ब्रह्मतत्त्व है। अब तेरे लिए कुछ भी जानना बाकी नहीं है।''

सत्यकाम के नेत्र हर्ष से छलछला उठे। गुरुदेव के ब्रह्मस्वरूप में स्थिर होकर वह भी ब्रह्मानंद में मग्न होकर कृतकृत्य हो उठा।

धन्य है ईश्वर-प्राप्ति के लिए सत्यकाम की तीव्र लगन ! धन्य है गुरु के प्रति उसकी श्रद्धा एवं गौसेवा ! श्रद्धा, सेवा और गुरुआज्ञापालन के बल पर सत्यकाम ने ईश्वर में दृढ़ स्थिति प्राप्त कर ली। अपने भी ऐसे दिन कब आयेंगे कि जब हम परमात्मा में स्थिति प्राप्त करने के लिए सब कुछ करने को तैयार हो जायेंगे !

**जिस क्षण आप सांसारिक पदार्थों में सुख की खोज करना छोड़ देंगे और स्वाधीन हो जायेंगे, अपने अन्दर की वास्तविकता का अनुभव करेंगे उसी क्षण से आपको ईश्वर के पास जाना नहीं पड़ेगा। ईश्वर स्वयं आपके पास आयेंगे। यही दैवी विधान है।**
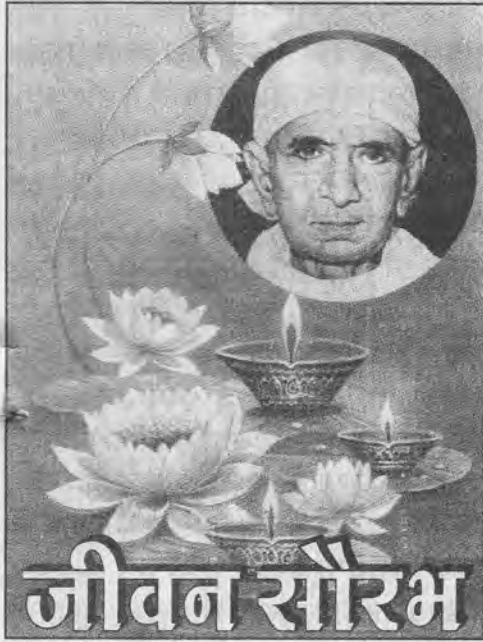
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

## लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

(गतांक का शेष)

जिस प्रकार कुम्हार घड़ा बनाते वक्त बाहर से कठोर व्यवहार करता दिखता है किन्तु अंदर से अपने कोमल हाथ का आधार देता है वैसे ही सद्गुरु बाहर से शिष्य के साथ कठोर व्यवहार करते, कठोर कसौटी करते दिखते हैं परंतु अंदर से उनका हृदय करुणा-कृपा से परिपूर्ण होता है। नरसिंह मेहता ने गुजराती में ठीक ही गाया है :

**भोंय सुवाडुं भूखे मारूं, उपरथी मारूं मार।**
**एटलुं करतां जो हरि भजे तो करी नाखुं निहाल ॥**

अर्थात्

**धरा सुलाऊँ भूखा मारूँ, ऊपर से लगाऊँ मार।**
**इतना करते हरि भजे, तो कर डालूँ निहाल ॥**

इस प्रकार निहाल कर देनेवाले सद्गुरु की फटकार, कड़वे शब्द जिन जिज्ञासु साधकों-शिष्यों को मिल जाते हैं वे सचमुच धन्य हैं।

स्वामी केशवानंद लीलाराम की सेवा और भक्ति से खूब प्रसन्न रहते थे। वे लीलाराम को 'विचारसागर', 'पंचीकरण', भर्तृहरि का 'वैराग्य शतक', 'श्रीमद् भगवद्गीता', 'सारसूक्तावली' एवं उपनिषद पढ़ाते। ऐसे उच्च कोटि के वेदान्त के ग्रंथों को कंठस्थ करके दूसरे दिन सुनाने के लिए कहते। कभी-कभी अत्यधिक सेवा के कारण लीलाराम को शास्त्र कंठस्थ करने का समय न मिलता तो गुरुदेव कान पकड़कर इतने जोर से गाल पर थप्पड़ मारते कि गाल पर दो-तीन घण्टे तक उँगलियों का निशान मौजूद रहता था।

शास्त्रों में आता है कि शास्त्रों की कितनी ही गूढ़ रहस्यभरी बातें, जिन्हें समझना मुश्किल है, जिसके अर्थ का अनर्थ होना संभव है उसे केवल सद्गुरु ही सत्शिष्यों को समझा सकते हैं और शिष्यों की शंकाओं का समाधान कर सकते हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है :

**तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।**
**उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥**

'तत्त्व को जाननेवाले ज्ञानी पुरुषों के पास जाकर उन्हें भली प्रकार दण्डवत् प्रणाम करके तथा सेवा और निष्कपट भाव से किये हुए प्रश्न द्वारा तू उस ज्ञान को जान। वे मर्म को जाननेवाले ज्ञानीजन तुझे उस ज्ञान का उपदेश करेंगे।' **(गीता : ४.३४)**

'यह संसार किस तरह प्रगट हुआ ? जीव को बंधन किस तरह हुआ ? मुक्ति कैसे पायी जाये ? ईश्वर का वास्तविक स्वरूप क्या है ? ईश्वर एवं जीव में क्या भेद है ? ब्रह्म क्या है ? माया क्या है ?' वगैरह गूढ़ रहस्यों का ज्ञान सद्गुरु द्वारा ही प्राप्त होता है। जैसे, निद्रा से जागते ही स्वप्न निवृत्त हो जाता है उसी प्रकार तत्त्वस्वरूप का ज्ञान होते ही अज्ञानरूपी अंधकार में सदियों से भटकता हुआ जीव क्षणभर में शिव हो जाता है। सद्गुरु के दर्शन, स्पर्श एवं उपदेश से शिष्य का कल्याण हो जाता है।

लीलाराम भी स्वयं पुरुषार्थ करके तत्परता से साधना में तल्लीन हो जाते। दिनोंदिन उनकी वृत्ति ब्रह्माकार होने लगी। द्वैतभाव धीरे-धीरे छूटने लगा। कभी-कभी उनका मन बेकाबू हो जाता तो वे उसे संयम में लाने के लिए अपने कान पकड़कर गाल के ऊपर तमाचा मार देते अथवा कभी छाती कूटते

अथवा कभी अपने मन को प्रेम से समझाते। इतनी छोटी उम्र में कभी कुछ खाने की इच्छा होती तो उस वस्तु को आगे रखकर पलथी मारकर बैठ जाते और मन से कहते :

''खा, लीला ! खा।'' परंतु उस वस्तु को उठाकर मुँह में नहीं रखते थे।

वे एकांत में बैठकर ध्यान करते एवं ध्यान करते-करते अगर कभी मन में बुरे विचार आते तो अपनेको दंड देते थे। इस प्रकार किशोरावस्था से ही उन्होंने अपनी सभी इच्छा-वासनाओं एवं चंचल मन पर नियंत्रण पा लिया था।

कभी-कभी फकीरी भाव में आ जाते तो आश्रम से गुम हो जाते एवं दूर जंगल में एकांत जगह पर जाकर ध्यान-भजन में लीन हो जाते। कभी-कभी ईश्वर के प्रेम का आस्वादन करते-करते मधुर गीत गाते-गाते रो पड़ते थे :

**मस्ती हस्ती है यारों ! और कुछ हस्ती नहीं।**
**बेखुदी हस्ती है यारों ! और कुछ मस्ती नहीं॥**

यह हस्ती तो ऐसी है कि जिसमें खुद ही न रहे। यह मस्ती तो ऐसी है जिसमें खुद की मस्ती में ही मस्त हुआ जाता है। लीलाराम भी अपने मन की मस्ती को मारकर खुद खुदा की, रब की मस्ती में मस्त रहते थे। थोड़े दिनों के बाद जब आश्रम में वापस आते तब स्वामी केशवानंद पूछते थे :

''कहाँ था ?''

तब सिर नीचे करके चुपचाप गुरुचरणों में बैठ जाते थे। कुछ भी न बोलते थे। उन्हें एकांतवास अत्यंत प्रिय था।

संत श्री केशवानंद स्वामी के तुलसीदास नामक एक मंदिरवाले गृहस्थ शिष्य थे एवं संबंधी भी थे। गृहस्थाश्रम में रहकर भी गुरुकृपा से उन्होंने अच्छी अध्यात्मिक अवस्था प्राप्त की थी। उन्होंने धार्मिक, व्यावहारिक एवं देशसेवा के कार्यों में अच्छा भाग लिया था। सन् १९३० में संत श्री केशवानंदजी एवं तुलसीदास दोनों सत्याग्रह आंदोलन के कारण जेल में भी गये थे। संत श्री केशवानंदजी उनके साथ ही रहते थे। लीलाराम भी इन लोगों के साथ कुटुम्बी की तरह ही रहते थे। तुलसीदास की माता लीलाराम को अपने पुत्र के समान ही मानती थी। घर के बालक भी गले में दुपट्टा डालकर लीलाराम से कहते थे :

''नाचो लीला ! नाचो कुछ गाओ।''

तब लीलाराम भी मस्ती में आ जाते थे एवं **'अहं ब्रह्मास्मि'** जैसे महावाक्य उनके श्रीमुख से स्फुरित होने लगते थे। 'मैं शाहों का शाह हूँ... मैं खुद खुदा हूँ...' कहते हुए आत्मा की मस्ती में वे स्थूल शरीर की हस्ती को भूल जाते थे।

जैसे-जैसे समय गुजरता गया वैसे-वैसे लीलाराम की आत्मानुभव की उत्कंठा तीव्र-तीव्रतर होने लगी। यह अवस्था देखकर गुरु ने कहा :

''लीलाराम ! संत रतन भगत के आश्रम में एकांत में रहकर साधना करो।''

गुरुआज्ञानुसार लीलाराम संत रतन भगत के आश्रम में जाकर गहन साधना में तल्लीन हो गये। कभी चने तो कभी सींग खाकर अपनी भूख मिटा लेते तो कभी-कभी कितने ही दिनों तक उपवास भी कर लेते थे। इस प्रकार कठोर तितिक्षाएँ सहन करते-करते लीलाराम आत्म-साक्षात्कार के पथ पर अग्रसर होने लगे।

जब तक जीव को अपने वास्तविक स्वरूप का भान नहीं होता तब तक चाहे जैसी अवस्था आ जाये परंतु मानव पूर्ण निश्चिन्त नहीं होता। अपने 'स्व' का ज्ञान हो जाये, अपने 'स्व' की पहचान हो जाये इसे आत्म-साक्षात्कार कहते हैं। यह साक्षात्कार किसी दूसरे का नहीं वरन् अपना साक्षात्कार है। इसीलिए इसे आत्म-साक्षात्कार कहते हैं। जब तक आत्म-साक्षात्कार नहीं होता तब तक व्यक्ति भले ३३ करोड़ श्रीकृष्ण या क्राईस्ट के बीच रहे फिर भी उसे पूर्ण विश्रांति नहीं मिलेगी। आत्मवेत्ता महापुरुष की आज्ञा में अपने मन की वासनाओं एवं मन की चंचलताओं को पूर्ण समर्पित कर दें तभी पूर्ण गुरुकृपा पायी जा सकती है।

**पूर्ण गुरु किरपा मिली पूर्ण गुरु का ज्ञान...**

आत्म-साक्षात्कार का तात्पर्य क्या है ? भगवान दत्तात्रेय कहते हैं : ''नाम, रूप और रंग

जहाँ नहीं पहुँचते ऐसे परब्रह्म में जिसने विश्रांति पायी है वह जीते-जी ही मुक्त है।'' नानकजी कहते हैं :

**रूप न रंग न रेख कछु प्रभु त्रैय गुणा ते भिन्न।**

रूप, रंग, आकार जो कुछ भी है वह स्थूल शरीर में है, मन में है, बुद्धि में है, संस्कार में है। देवी-देवता के दर्शन भी यदि हो जायें तो वे भी मायाविशिष्ट चैतन्य में ही होंगे। उनके दर्शन से भी पूर्ण विश्रांति नहीं मिलेगी। यह स्थूल जगत, सूक्ष्म जगत एवं जीव-जगत तथा ईश्वर ये सब माया के ही अन्तर्गत हैं। जबकि आत्म-साक्षात्कार है माया से पार... जिसकी सत्ता से यह जीव, जगत और ईश्वर दिखता है उस सत्ता का 'मैं' रूप से अनुभव करना इसीका नाम है आत्म-साक्षात्कार। जीव, जगत एवं ईश्वर का अस्तित्व जिसके आधार से दिखता है, अस्थायी एवं परिवर्तनशील अस्तित्व का आधार जो अबदल आत्मा है, उसे ज्यों-का-त्यों जानना इसीको कहते हैं आत्म-साक्षात्कार।

आत्म-साक्षात्कार के उस पथिक की यात्रा का अंत हुआ, लीलाराम का तप, वैराग्य एवं गुरुभक्ति फली और उसके परिपाकस्वरूप बीस वर्ष की उम्र में ही उन्होंने अपने आत्मस्वरूप का साक्षात्कार कर लिया। जिसके लिए घर-बार छोड़ा था, सगे-संबंधी छोड़े थे, धन-ऐश्वर्य छोड़ा था, फकीरी अपनायी थी, जप-तप, आसन-प्राणायाम, ध्यान-समाधि का अभ्यास किया था उस लक्ष्य को गुरुकृपा से हासिल कर लिया। सद्गुरुदेव ने घर में ही घर बता दिया... साधक में से सिद्ध अवस्था को पा लिया... अपने अंदर ही परमानंदस्वरूप परमात्मा का अनुभव हो गया। स्वामी रामतीर्थ ने ऐसी उन्मत्त अवस्था का वर्णन करते हुए कहा है :

**लख चौरासी के चक्कर से थका, खोली कमर।**
**अब रहा आराम पाना, काम क्या बाकी रहा ?**
**जानना था वो ही जाना, काम क्या बाकी रहा ?**
**लग गया पूरा निशाना, काम क्या बाकी रहा ?**
**देह के प्रारब्ध से मिलता है सबको सब कुछ।**
**नाहक जग को रिझाना, काम क्या बाकी रहा ?**

समय बीतने पर साधक लीलाराम अब संत लीलाराम के नाम से प्रसिद्ध होने लगे। संत लीलाराम थोड़े वर्षों तक नैनिताल के जंगलों में, एकांत में अपनी ब्रह्मनिष्ठा में ही लीन रहे। साथ ही साथ सत्संग, सेवा और साधना में भी नित्य लगे रहते। सत्संग किये बिना दिवस या रात्रि में कभी भी भोजन नहीं करते थे।

...थोड़े समय के बाद उनके पूज्यपाद गुरुदेव ने नश्वर देह को छोड़ा। उनकी समाधि टंडोजानमुहमद के आश्रम में ही बनायी गयी। वहाँ हर वर्ष उनकी जयंती मनाने के लिए दूर-दूर से शिष्य, भक्त एवं संत कँवरराम जैसे महापुरुष भी आते थे। इस उत्सव की पूरी व्यवस्था करने के लिए संत लीलाराम स्वयं आते और हर प्रकार की सेवा करते। किन्तु किसी भी दिन आश्रम में नहीं रहते थे। उत्सव पूरा होते ही तलहार चले जात थे।

एक बार संत लीलाराम जब गुरुदेव के आश्रम में आये तब उन्होंने देखा कि आश्रम में साधकों की साधना करने के लिए जो कमरे बनवाये गये हैं, उन्हें गृहस्थी लोगों को रहने के लिए किराये पर दे दिया गया है। यह देखकर संत लीलाराम अत्यंत दुःखी हुए। गृहस्थ साधक तुलसीदास ने पैसे के लोभ में यह कार्य किया था। उन्होंने तुलसीदास को फटकारते हुए कहा :

''मोह-माया के आवरण में आकर तुमने गुरुदेव के पवित्र आश्रम को गृहस्थियों के रहने की जगह बना दिया है। यह जरा भी योग्य नहीं है। शिष्य के रूप में तुमने यह अच्छा काम नहीं किया है।''

आश्रम के दूसरे गुरुभाई संत लीलाराम से खूब डरते थे क्योंकि अपनी वाक्सिद्धि के कारण वे जो कुछ भी बोलते थे वह होकर ही रहता था। इसलिए तुलसीदास तो घबराकर कुछ न बोले परंतु जब उनकी धर्मपत्नी को इस बात का पता चला तब वह बहुत क्रोधित हो गयीं। हमेशा की तरह जब संत लीलाराम उन लोगों के घर भोजन करने गये तो उसने गुस्से से भरकर कहा :

''चूल्हे में से खा।''

(शेष पृष्ठ १५ पर)

हो जाती हैं। आपका बच्चा यदि शरारती है, पढ़ता नहीं है, आपकी इच्छा के विरुद्ध चलता है तो जब वह सो जाये तब आप उसके मस्तिष्क के पिछले हिस्से की ओर निहारते हुए मन में बार-बार संकल्प दोहराओ तो धीरे-धीरे बालक के विचार आपके संकल्प के मुताबिक बदलने लगेंगे। ऐसे ही सूक्ष्म जगत में मनःशक्ति बड़ी काम देती है।

*आपके मन में अथाह सामर्थ्य है। तुम जैसे संकल्प या विचार करते हो वैसा ही वातावरण निर्मित होता है। जो इस रहस्य को जानता है, वह अपने संकल्प के अनुसार किसीसे भी कार्य करवा सकता है।*

अभी विज्ञान साबित कर रहा है कि मस्तिष्क में करीब डेढ़ करोड़ ज्ञानतंतु हैं और मस्तिष्क के पीछे का हिस्सा जल्दी तरंगों को, विचारों को ग्रहण करता है जबकि आगे का हिस्सा विचारों को प्रवाहित करता है। आदमी जब विचार करता है, कुछ सोचता है तो भृकुटि का हिस्सा सक्रिय हो जाता है।

*तुम शुद्ध हृदय तो लेकर आओ, श्रद्धालु दिल लेकर तो आओ, फिर देखो कि सत्संग में तुम्हें क्या नहीं मिलता है! ध्यान से तुम्हें क्या नहीं मिलता है!*

जर्मनी में एक मनोवैज्ञानिक इस विषय में प्रयोग करते हुए सड़कों पर घूमा करता था। कोई आदमी जाता तो उसके पीछे त्राटक करते हुए वह अपने मन में दोहराता : 'तुम्हारे माथे पर कीड़ा है... सिर को खुजलाओ... जल्दी करो... खुजलाओ...' मन में वह इसे दृढ़ता से दोहराता तो आगे जानेवाला व्यक्ति जल्दी से अपना सिर खुजलाने लग जाता था। इस प्रकार उसने हजारों व्यक्तियों को खुजलाने के लिए विवश कर दिया। फिर उसने अपना यह अनुभव अखबारवालों को बताया। बाद में सड़क पर चलनेवाले लोगों को सचमुच भी खुजली आती तो सोचते थे कि वह प्रयोग करनेवाला आदमी तो पीछे नहीं है!

मन के संकल्पों का कितना प्रभाव है! यदि कोई अनजान आदमी संकल्प के द्वारा आपके हाथ को मस्तक पर पहुँचा सकता है तो संतपुरुष आपके मन को मालिक तक पहुँचा दें तो इसमें क्या आश्चर्य है?

आदमी के आगे के हिस्से से, नेत्रों एवं हाथ-पैरों की उँगलियों से विचार के परमाणु बरसते हैं। यही कारण है कि हमारे धर्म में संतों को, गुरुजनों को प्रणाम करने की परंपरा है। प्रणाम के द्वारा परस्पर शुभ संकल्पों का लेनदेन होता है।

जब हम संतों के श्रीचरणों में प्रणाम करते हैं तब उनके श्रीचरणों से बरसते हुए शुभ संकल्पों को हमारा मस्तिष्क ग्रहण करता है। उनका करकमल आशीर्वाद की मुद्रा में होता है तो उनके करकमलों से बरसते हुए शुभ- संकल्पों का हमें लाभ मिलता है जिससे हमारी उन्नति सहज ही होने लगती है। यही कारण है कि हमारे धर्म में गुरुजनों को प्रणाम करने की परंपरा है। हमें अपनी संस्कृति एवं धर्म के रहस्यों को समझकर उनका लाभ अवश्य उठाना चाहिए। इसीमें हमारा कल्याण है।

*

(पृष्ठ १३ का शेष)

सामान्य रूप से ऐसा कहा जाता है कि जब कोई संत, महात्मा किसी गृहस्थी के घर जाते हैं उस वक्त यदि वे किसी भी प्रकार का प्रसाद लिये बिना ही खाली हाथ लौट जाते हैं तो उस गृहस्थ के घर पर संकट आने का भय रहता है। सरल एवं करुणामय हृदय के संत लीलाराम ने भी तुलसीदास की धर्मपत्नी के कटुवचनों की तरफ ध्यान नहीं दिया और उन्हें गृहस्थ धर्म के ऋण से मुक्त किया। संत लीलाराम ने एक शब्द भी बोले बिना, क्रोध किये बिना, सीधे चूल्हे के पास जाकर, राख लेकर थोड़ी जीभ पर रखी, थोड़ी मस्तक पर रखी एवं सबको प्रणाम करके तुरंत ही वहाँसे निकल पड़े। किसीको पता तक न चला कि कहाँ गये।

# जीवन जीने की कला

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

रोम देश में एक वजीर का जन्मोत्सव खूब धूमधाम से मनाया जा रहा था। रसोईघर में भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यंजन तैयार हो रहे थे। बहुत मित्र आये हुए थे। वातावरण में प्रसन्नता और उल्लास छाया हुआ था। इतने में नंगी तलवार लिए सम्राट के कुछ सैनिक सम्राट का यह संदेश लेकर वजीर के पास आये कि : ''आज छः बजे तुम्हें फाँसी पर चढ़ाया जायेगा।''

यह सुनते ही सभी वाद्य बंद हो गये। उल्लास का वातावरण गम में बदल गया। सभी मित्रों एवं स्नेहियों के चेहरे मुरझा गये।

यह देखकर वजीर ने कहा :

''क्या बात है ? आप सब चुप क्यों हो गये ? वाद्य बजाओ, गाओ। यही तो घड़ियाँ हैं खुशियाँ मनाने की। जिस दिन जन्म हुआ था, उसी दिन से हम मृत्यु की ओर जा रहे थे। यह तो खुशी की बात है कि जिस दिन जन्मदिवस है, उसी दिन मौत हो रही है।''

अभी तक तो नर्तक-नर्तकियाँ नाच रहे थे, अब मैं भी नाचूँगा। अभी तक तो गायक गा रहे थे, अब मैं भी गाऊँगा। अब चिंतित होने की, रोने की घड़ियाँ कहाँ बचीं ? समय बहुत कम है। मुस्करा लो, गुनगुना लो, नाच लो। आगे की घड़ियाँ किसने देखी हैं ? ये आखिरी घड़ियाँ हैं... उत्सव मना लो। फाँसी पर तो शाम को छः बजे चढ़ना है। अभी तो हो जाने दो उत्सव, बजाओ वाद्य।''

साजवाले बेचारे क्या बजाते ? फिर भी आज्ञा थी अतः मुरझाये चेहरे एवं ढीले-ढाले हाथों से साज बजाना आरंभ किया। जैसे ही वाद्य बजने लगे, वजीर ने नृत्य करना शुरू कर दिया। उसके स्वाभाविक नृत्य को देखकर साज बजानेवालों में भी रंग आ गया। किन्तु अन्य लोगों को चिंता ने घेर लिया था। लोग जिस उत्साह एवं खुशी को लेकर आये थे, वह खुशी खो गयी और सभी शोक के सागर में डूबने-उतराने लगे।

यह सब होते हुए भी वजीर अपनी मस्ती में नाचता रहा। यह देखकर मृत्यु का संदेश लेकर आये हुए सैनिक भी बड़े आश्चर्य में पड़ गये कि 'सब चिंतित और उदास हैं किन्तु यह वजीर भी बड़ा अजीब आदमी है जो अपनी मौत की बात सुनकर भी नाचे-गाये जा रहा है !... इसका रोआँ-रोआँ प्रफुल्लित हो रहा है ! ऐसा लग रहा है मानो, मौत की नहीं अपितु किसी अत्यंत प्रिय व्यक्ति के मिलन की घड़ियाँ नजदीक आ रही हों !'

उन सिपाहियों ने राजा को समाचार दिये और कहा : ''आपने वैरभाव से, डराने के लिए जिस वजीर के लिए फाँसी का संदेश भेजा था, वह वजीर तो चिंतित होने की जगह पर अत्यंत खुशी से नाच रहा है। संदेश सुनकर वह जरा भी नहीं घबराया। ऐसे व्यक्ति को आप

> *अगर आप भी मौत से मुस्कराते हुए मिलो तो मौत आपको भी नहीं मार सकती। मौत को देखते हुए आप मौत के भी साक्षी हो सकते हो। यदि आप दुःख, विघ्न-बाधाओं से मुस्कराते हुए मिलोगे तो दुनिया का बड़े-से-बड़ा दुःख या विघ्न भी आपको विचलित नहीं कर सकेगा।*

> *जीवन में शिकायतें और नकारात्मक चिंतन होगा तो जीवन की शक्तियाँ उसीमें क्षीण हो जाएँगी तथा लक्ष्य तक पहुँचना कठिन हो जायेगा।*

फाँसी पर चढ़ायेंगे ? राजन्! जरा चलकर तो देखिए !''

सिपाहियों की बात सुनकर राजा स्वयं गया एवं वजीर को खुशी से नृत्य करते हुए देखकर आश्चर्यचकित हो उठा। उसने वजीर से पूछा :

''तू पागल तो नहीं हो गया ?''

वजीर : ''महाराज ! पागल क्या होना ? एक दिन तो मौत आने ही वाली थी। यह घड़ियाँ तो अत्यंत कीमती घड़ियाँ हैं। जीवन तो वही है कि सामने मृत्यु खड़ी होने पर भी मुस्कान चालू रहे।

**मुस्कराकर गम का जहर**
**जिनको पीना आ गया।**
**यह हकीकत है कि जहाँ में**
**उनको जीना आ गया॥**

जो मौत को प्यार करता है, वह जीवन का भी वास्तविक आनंद ले सकता है। जो मौत से निर्भीक है वह जीवन में भी ठीक निर्भीक हो सकता है।''

यह सुनकर राजा को हुआ कि : 'इतने भले व्यक्ति से वैर करके उसे फाँसी देना उचित नहीं है।' अतः राजा ने उससे क्षमा माँगी। तब वजीर ने कहा :

''राजन् ! इसमें क्षमा किस बात की ? वैसे तो कई जन्मदिन आये और गये किंतु आपने इस जन्मदिन पर तो जीवन एवं मौत दोनों एक साथ भेज दिया। राजन् ! आपको धन्यवाद है।''

**जो मंजिल चलते हैं**
**वे शिकवा नहीं किया करते।**
**जो शिकवा करते हैं**
**वे मंजिल नहीं पहुँचा करते॥**

जिन्हें मंजिल पर पहुँचना है उन्हें शिकायत किस बात की ? ...और जो शिकायत लेकर बैठा है उसका पहुँचना कैसा ? यदि जीवन में शिकायतें और नकारात्मक चिंतन होगा तो जीवन की शक्तियाँ उसीमें क्षीण हो जाएँगी तथा लक्ष्य तक पहुँचना कठिन हो जायेगा।

जिन्होंने अध्यात्मिक यात्रा करके भीतर के रस को, भीतर की शांति को पा लिया है, जिन्होंने जीवन की गहराइयों का आस्वाद पा लिया है - ऐसे लोगों के लिए मौत का पैगाम भी जीवन का संदेश दे देता है। जैसे, वजीर ने सुना कि : 'राजा साहब फाँसी पर चढ़ायेंगे।' यह सुनकर भी न तो वह दुःखी हुआ और न ही उसने शिकायत की कि : 'मैं तो निर्दोष हूँ। मैंने राजा का क्या बिगाड़ा है ? आजका उत्सव का दिन मृत्यु के दिन में क्यों बदला जा रहा है ?' नहीं, वरन् वजीर ने सोचा कि : 'अकेले मर जाता उसकी अपेक्षा उत्सव करके मर रहा हूँ... अच्छी बात है।' और यह सोचकर वजीर नृत्य करने लगा तो मौत भी जीवन में बदल गयी और मौत का पैगाम सुनानेवाला ही माफी माँगने लगा।

इसी प्रकार अगर आप भी मौत से मुस्कराते हुए मिलो तो मौत आपको भी नहीं मार सकती। मौत को देखते हुए आप मौत के भी साक्षी हो सकते हो। यदि आप दुःख, विघ्न-बाधाओं से मुस्कराते हुए मिलोगे तो दुनिया का बड़े-से-बड़ा दुःख या विघ्न भी आपको विचलित नहीं कर सकेगा। अन्यथा, ऐसा कौन-सा माई का लाल है जिसको संसार में दुःख, विघ्न-बाधाएँ न आयी हों ? फिर चाहे सेठ हो या नौकर, नानक हो या क़बीर, बुद्ध हो या महावीर, कृष्ण हो या राम... सबके जीवन में दुःख, विघ्न और बाधाएँ तो आती हैं किन्तु जो मुस्कराना जानते हैं उनके आगे दुःख, विघ्न और बाधाएँ भी साधना बन जाती हैं।

*जो मौत को प्यार करता है, वह जीवन का भी वास्तविक आनंद ले सकता है। जो मौत से निर्भीक है वह जीवन में भी ठीक निर्भीक हो सकता है।*

*यह वजीर भी बड़ा अजीब आदमी है जो अपनी मौत की बात सुनकर भी नाचे-गाये जा रहा है !... इसका रोआँ-रोआँ प्रफुल्लित हो रहा है ! ऐसा लग रहा है मानो, मौत की नहीं अपितु किसी अत्यंत प्रिय व्यक्ति के मिलन की घड़ियाँ नजदीक आ रही हों !'*

*– पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

## तेरी चाही में प्रभु !

**तेरी चाही में प्रभु ! है मेरा कल्याण ।**
**मेरी चाही मत करो मैं मूरख नादान ॥**

साधक की यह प्रार्थना होनी चाहिए कि 'हे प्रभु ! जो तू चाहे वही हो । मेरा चाहा हुआ न हो क्योंकि मैं तो मूर्ख और नादान हूँ। मुझे नहीं पता कि मेरा हित किसमें है पर तू तो जानता है न... ?'

परमात्मा सभी के परम सुहृद हैं । वे सदैव हमारा हित ही चाहते हैं किन्तु हम इस बात को नहीं समझ पाते और अपनी इच्छानुसार कार्य न होने पर उन्हें ही कभी-कभार कोसने लगते हैं जो कि उचित नहीं है ।

कुछ वर्ष पूर्व की बात है ।

पूरे भारत के पत्रकारों एवं संपादकों का एक बड़ा सम्मेलन होने जा रहा था । दिल्ली से प्रकाशित 'तेज अखबार' के संपादक देशबन्धु जिस हवाई जहाज में जा रहे थे, उसी हवाई जहाज में 'भारत तर्कवाद' के संपादक देवीदास (जो कि महात्मा गाँधी के पुत्र थे) भी जाना चाहते थे लेकिन हवाई जहाज पूरा भर चुका था एवं उसमें एक भी सीट खाली नहीं थी । सम्मेलन में जाना अत्यंत जरूरी होने के कारण देवीदास गाँधी ने अपने मित्रों एवं रिश्तेदारों के परिचय द्वारा काफी प्रयास किये किन्तु वे सफल न हो सके ।

तब वे सोचने लगे : 'यह दुनिया केवल मतलब की है । जब दुनिया के मित्रों को मेरी जरूरत थी, तब मैंने अपना काम छोड़कर भी उनकी मदद की किन्तु आज जब मुझे उनकी अत्यंत जरूरत है तब कोई काम नहीं आ रहा...'

जहाज ने अपने नियत समय पर उड़ान भरी और कलकत्ते के दमदम हवाई अड्डे तक पहुँचा लेकिन वहाँ के वातावरण में कोहरा छाया होने के कारण उसका नीचे उतरना लगभग असंभव-सा नजर आने लगा । विमानचालक ने काफी प्रयत्न भी किये किन्तु कोहरा होने के कारण उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था ।

तब विमानचालक ने अनुमान लगाते हुए जहाज को सागर-तट पर उतारना शुरू किया । वातावरण में छायी धुंध के कारण उसे पता तक न चल पाया कि वह जहाज को घने जंगल की ओर ले जा रहा है ! जहाज एक विशाल वृक्ष से टकराया, फिर अन्य वृक्षों से टकराता-टकराता नीचे गिर पड़ा । पेट्रोल की टंकी फट गयी और वह जहाज वहीं जलकर खाक हो गया । सारे यात्री भी वहीं जलकर खाक हो गये ।

जब यह समाचार देवीदास गाँधी तक पहुँचा तो वे एकदम चौंक उठे ! ईश्वर की दीर्घदृष्टि को देखकर उनका हृदय अहोभाव से भर उठा और वे बोल पड़े :

''हे प्रभु ! अगर मुझे भी उस जहाज में जगह मिल गयी होती तो आज मैं यह कहने के लिए भी इस पृथ्वी पर नहीं होता वरन् जलकर खाक हो गया होता । आपकी दिव्य दृष्टि दूर तक देखती है जहाँ तक मेरी आँखें तो क्या मेरा मन और बुद्धि भी नहीं पहुँच सकते हैं ।''

*''हे प्रभु ! अगर मुझे भी उस जहाज में जगह मिल गयी होती तो आज मैं यह कहने के लिए भी इस पृथ्वी पर नहीं होता वरन् जलकर खाक हो गया होता । आपकी दिव्य दृष्टि दूर तक देखती है जहाँ तक मेरी आँखें तो क्या मेरा मन और बुद्धि भी नहीं पहुँच सकते हैं ।''*

देवीदास गाँधी की आँखें तो उस घटना के बाद खुली लेकिन हम चाहें तो अपनी आँखें आज से तो क्या अभी से खोल सकते हैं । अभी से उस एक

परमेश्वर पर भरोसा रखकर उसी पर सब छोड़ दें। उससे कह दें कि :

**दीनबंधु दीनानाथ ! मेरी डोरी तेरे हाथ।**

इसीमें हमारा कल्याण है। अगर हमारा चाहा नहीं हो पाता है तो उसे ईश्वर की मर्जी मानकर उसी पर छोड़ दें क्योंकि उस समय भले हमें अपने कल्याण की बात समझ में नहीं आती हो किन्तु उसकी मर्जी में अपनी मर्जी मिलाने से परिणाम निश्चय ही कल्याणकारी होता है। यह निश्चित रूप से जान लें कि -

**जो तिद् भावे सो भलिकार।**

जो तुझे अच्छा लगे, उसीमें हमारी भलाई है।

अपनी ओर से पुरुषार्थ में कमी न रखें। अपनेको पलायनवादी न बनाएँ। फल और परिणाम प्रभु के हवाले कर दें।

*

# भगत जगत को ठगत है...

भक्त या सत्संगी से तात्पर्य भोले या बुद्धू व्यक्ति से नहीं है वरन् भक्त तो वह है जो कभी भी भगवान से विभक्त न हो।

दो मित्र थे। उनमें से एक था चतुर और दूसरा था भोला भगत। दोनों ने मिलकर एक भैंस खरीदी। चतुर मित्र ने कहा :

''भैंस का आगे का हिस्सा तेरा और पीछे का हिस्सा मेरा।''

भोला मित्र : ''ठीक है, जैसी भगवान की मर्जी।''

अब होता क्या कि वह चतुर मित्र भैंस के पीछे के हिस्से से दूध दोह-दोहकर ले जाता और आगे के हिस्सेवाला वह भोला मित्र बेचारा ! घास खिला-खिलाकर कंगाल होता जाता।

एक दिन वह भोला मित्र पहुँचा अपने गुरु के पास और अपनी व्यथा सुनाते हुए कहने लगा : '' मेरा मित्र होते हुए भी उसने मेरे साथ ऐसा क्यों किया ?''

तब गुरु ने युक्ति बता दी। चतुर मित्र जब दूध दोहने बैठा तब भोला मित्र भैंस के मुँह पर लकड़ी मारने लगा। इससे भैंस कूदने लगी। दूध दोहना असंभव हो गया। चतुर मित्र बोला :

''अरे मित्र ! यह क्या करता है ?''

''मैं अपने हिस्से में कुछ भी करूँ, इससे तुम्हें क्या ? भैंस का आगे का हिस्सा तो मेरा है न ?''

चतुर समझ गया कि भोले में भी चतुराई आ गयी है। वह बोला :

''अरे दोस्त ! ऐसा मत कर। आधा दूध तेरा और आधा मेरा।''

भोला मित्र : ''ठीक है।''

शीत ऋतु आने पर फिर से दोनों मित्रों ने साझेदारी में एक कंबल खरीदा।

चतुर मित्र : ''दिन को कंबल तेरा और रात को मेरा।''

उस भोले मित्र ने कहा :

''ठीक है। **जो तिद भावे सो भलिकार।**''

रात को तो वह चतुर मित्र आराम से कंबल ओढ़कर सो जाता और यह भोला मित्र बेचारा सारी रात ठिठुरता रहता था।

*''तेरा कोट मेरे जूते खोजने गया है। तू रोज मुझ पर रोब मारता है। अपने नम्र स्वभाव के कारण मैं सह भी लेता हूँ। मैं प्रेम कर सकता हूँ किन्तु तेरी कूटनीति का शिकार नहीं बन सकता हूँ।''*

आखिरकार परेशान होकर भोला मित्र फिर से अपने गुरु के पास गया और उनको अपनी सारी गाथा सुनाते हुए कहने लगा : ''गुरुदेव! सारी रात वह तो मजे से कंबल ओढ़कर सो जाता है और मैं ठिठुरता रहता हूँ। क्या करूँ ?''

गुरुजी : ''तू घबरा मत। शर्त के मुताबिक कंबल दिन को तेरा है न ?''

''जी गुरुजी !''

गुरुजी : ''तो एक काम कर। दिन डूबने से पहले तू कम्बल को पानी में डुबा देना।''

भोले भगत ने ऐसा ही किया। चतुर मित्र जब रात्रि को सोने आया तब कंबल को पानी में डूबा हुआ देखकर कहने लगा :

''यह क्या ? कंबल को तुमने पानी में क्यों डुबा दिया ?''

भोला मित्र : ''दिन को कंबल मेरा है। मैं चाहे जो भी करूँ। रात को तेरा है तो ले लो अपना कंबल।''

तब चतुर मित्र बोला :

''दोस्त ! ऐसा क्यों करता है ? हम दोनों ही कंबल ओढ़कर सो जायेंगे।''

ऐसे ही कई बार ज्यादा चतुर लोग भक्तों को ठगने का सोचते हैं तब भक्तों को भी युक्ति से काम लेना पड़ता है।

दो दोस्त थे । उनमें से एक भक्त था और दूसरा जरा ज्यादा चतुर था । वह चतुर मित्र रोज अपने भक्त मित्र पर रुआब मारता था। काफी दिनों तक ऐसा होने पर भक्त मित्र ने भी उसे सबक सिखाने का सोच लिया।

एक दिन सफर के दौरान चतुर मित्र ने भक्त मित्र पर रुआब मारते हुए उसके जूते फेंक दिये। जब वह चतुर मित्र सो गया तब भक्त मित्र ने उसका कोट उठाकर फेंक दिया।

वह चतुर मित्र सोकर उठा तब अपना कोट वहाँ न पाकर पूछने लगा :

''अरे, मेरा कोट कहाँ गया ?''तब भक्त मित्र ने जवाब दिया :

''तेरा कोट मेरे जूते खोजने गया है। तू रोज मुझ पर रोब मारता है। अपने नम्र स्वभाव के कारण मैं सह भी लेता हूँ। मैं प्रेम कर सकता हूँ किन्तु तेरी कूटनीति का शिकार नहीं बन सकता हूँ।''

मूर्ख और बेवकूफ का नाम भक्त नहीं है। भक्त को तो बड़ा व्यवहारकुशल होना चाहिए।

कबीरजी ने ठीक ही कहा है :

**भगत जगत को ठगत है भगत को ठगे न कोई।**
**एक बार जो भगत ठगे अखंड यज्ञ फल होई ॥**

अपने आत्मज्ञान से, अपने आत्मभाव से, अपने विवेक से, अपने वैराग्य से, अपनी ईश्वरीय मस्ती से विभक्त न हो उसका नाम है - भक्त।

*कई बार ज्यादा चतुर लोग भक्तों को ठगने का सोचते हैं तब भक्तों को भी युक्ति से काम लेना पड़ता है।*

ऐसे भक्त किसीसे ठगे नहीं जाते हैं । अपने अंधे स्वार्थ के वशीभूत होकर कोई उन्हें उल्लू बनाता रहे यह संभव नहीं है। फिर भी आत्मज्ञान को पाये हुए, परमात्मप्राप्त, आत्मवेत्ता भक्त स्वयं ही अपनेको ठगवाते रहते हैं।

ठगवाते रहते हैं ! वह कैसे ? जैसे नेता को यदि कुर्सी मिलती है तो वह अपने चमचों की ओर देखता है, सेठ को यदि धन मिलता है तो वह देश-परदेश के बैंकों की ओर देखता है ऐसे ही भक्तों को जब भक्ति का रस मिलता है तो वे भी गाँव-गाँव, नगर-नगर, शहर-शहर, देश-परदेश घूमते हैं उस भक्तिरस को लुटवाने के लिए, अपनेको ठगवाने के लिए....

*

(पृष्ठ ३ का शेष)

भी गंदा नहीं रखना चाहते हैं किन्तु यदि बुद्धि गंदी हो जाती है, मलिन हो जाती है तो उसको स्वच्छ, शुद्ध करने की तत्परता नहीं बरतते हैं। ऐसे लोग भले ही दीवानखाना सजा लें, गाड़ियाँ सजा लें, रसोईघर सजा लें, शरीर को सजा लें किन्तु उन्होंने यदि बुद्धि को नहीं सजाया, बुद्धि को स्वच्छ नहीं किया तो उनकी सारी सजावट व्यर्थ हो जाती है।

...तो बुद्धि को सजाया कैसे जाय ? बुद्धि सजती है विवेक से।

एक आत्मवेत्ता महापुरुष कहा करते थे :

''वे काम कभी मत करो कि जिनमें विवेक का उपयोग न होता हो। वे भावनाएँ कभी मत करो कि जिनमें विवेक न हो और वे भोग कभी मत भोगो कि जिनमें विवेक की प्रधानता न हो।'' अर्थात् करने, भोगने, लेने, देने आदि सभी में विवेक जरूर होना चाहिए।

जिसके पास विवेक है, वही बुद्धि को शुद्ध रख सकता है और जिसकी बुद्धि शुद्ध है उसी जीव को परमात्मप्राप्तिरूपी मंजिल हासिल हो सकती है। जिसने उस मंजिल को पा लिया है वही सदा के लिए शोक-मोहादि द्वन्द्वों से पार होकर परमानंद में रमण कर सकता है।

ॐ...ॐ...ॐ...

# सत्यकाम जाबाल

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

''प्रभु ! ब्रह्मचर्य का पालन करके, विद्याभ्यास करने के पश्चात् माता के श्रीचरणों की सेवा करने की इच्छा है। कृपा करके आप मेरा स्वीकार करें।''

एक नन्हें-से किशोर ने गौतम ऋषि के श्रीचरणों में प्रणाम करते हुए विनम्र भाव से कहा।

महर्षि हरिद्रुम के पुत्र गौतम ऋषि ने स्नेहपूर्वक उसका अभिनंदन करते हुए पूछा :

''सौम्य ! तेरा कौन-सा गोत्र है ?''

''मैंने अपनी माँ से यही बात पूछी थी। माँ ने कहा था कि जब वे युवावस्था में थीं तब मेरे पिता के घर बहुत-से अतिथि आते-जाते रहते थे। मेरी माँ अतिथि-सेवा में ही तल्लीन रहती थीं जिससे वे मेरे पिता से गोत्र नहीं पूछ पायीं। मेरे पिता मेरी शैशवावस्था में ही परलोक में प्रयाण कर गये। इसलिए भगवन् ! मुझे केवल इतना पता है कि मैं माता जाबाला का पुत्र सत्यकाम हूँ।''

गौतम ऋषि ने प्रसन्न होकर कहा :

''वत्स ! इस प्रकार सरल भाव से सत्य बात ब्राह्मण के सिवाय दूसरा कोई भी नहीं कर सकता है। ऐसी सत्य एवं निष्कपट बात करनेवाला तू निश्चय ही ब्राह्मण है। जाकर थोड़ी समिधा ले आ। मैं तेरा उपनयन संस्कार करूँगा।''

फिर एक शुभ मुहूर्त में ऋषि ने विधिपूर्वक उसका उपनयन संस्कार किया। किशोर सत्यकाम के आनंद की सीमा न रही ! गुरुवर के श्रीचरणों में प्रणाम करने के बाद जब वह उठ खड़ा हुआ तब गुरुवर ने सेवा सौंपते हुए कहा : ''बेटा ! तेरे विद्याभ्यास का आरंभ गौसेवा से होगा।''

ऐसा कहकर गौतम ऋषि उसे आश्रम की गौशाला में ले गये। गौशाला में से दुबली-पतली चार-सौ गायें पसंद करके उन गायों की रखवाली का काम सत्यकाम को सौंपते हुए गुरु ने पुनः कहा :

''बेटा ! इन गायों को चराने के लिए वन में ले जा। जब तक इनकी संख्या एक हजार न हो जाये तब तक तू यहाँ वापस मत लौटना।''

सत्यकाम ने गुरुदेव की आज्ञा को सहर्ष स्वीकार कर लिया। जिसमें परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करने की सच्ची अभिलाषा है, तीव्र जिज्ञासा है, उसमें हिमालय जैसा अडिग धैर्य अपने-आप आ जाता है।

सत्यकाम उन चार सौ गायों को लेकर जंगल की ओर चल पड़ा। जहाँ बारहों महीने जलाशय पानी से भरे रहते हों, वर्षा ऋतु में बारिश अच्छी होती हो, घास-चारे की कमी न हो - ऐसे वन की खोज करके सत्यकाम उन चार सौ गायों को वहाँ ले गया। पर्णकुटी बनाकर अत्यंत सावधानी एवं तत्परतापूर्वक वह गायों की सेवा करने लगा। बरसों बीतने लगे। गुरुजी ने चार सौ गायों की संख्या एक हजार तक करके वापस लौटने के लिए कहा था। वापस लौटने की कोई निश्चित अवधि न थी। सत्यकाम को फल की आशा भी कहाँ थी ! गायों की सेवा करने में एवं यत्नपूर्वक

> *सत्यकाम के नेत्र हर्ष से छलछला उठे। गुरुदेव के ब्रह्मस्वरूप में स्थिर होकर वह भी ब्रह्मानंद में मग्न होकर कृतकृत्य हो उठा।*

> *''हे गुरुदेव ! आपके जैसे आचार्य द्वारा प्राप्त होनेवाली विद्या ही श्रेष्ठ विद्या होती है। अब आप मुझे उपदेश देने की कृपा करें। मुझे ब्रह्मज्ञान से विभूषित करें।''*

उनकी सँभाल रखने में ओतप्रोत उस ब्राह्मण कुमार के पास गायों को गिनने का समय ही कहाँ था ? फिर भी वह अपनी प्रत्येक गाय को पहचानता था। किसी भी गाय को उसने हिंसक प्राणियों का शिकार नहीं होने दिया था। उसकी रखवाली सराहनीय थी। अच्छे-अच्छे रखवाले भी पीछे छूट जायें ऐसी थी उसकी कुशलतापूर्ण रखवाली।

*''वत्स ! इस प्रकार सरल भाव से सत्य बात ब्राह्मण के सिवाय दूसरा कोई भी नहीं कर सकता है। ऐसी सत्य एवं निष्कपट बात करनेवाला तू निश्चय ही ब्राह्मण है।*

सत्यकाम को भले ही अपनी सेवा के फल की इच्छा न थी, फिर भी जिस प्रकार गाय के पीछे उसका बछड़ा अपने आप चला आता है उसी प्रकार कर्म के पीछे फल तो सदैव चला ही आता है।

जिसके जीवन में श्रद्धा, तितिक्षा, धैर्य एवं सेवा होती है उस पर कृपा करने के लिए तो देवता भी तैयार होते हैं। जब गायों की संख्या एक हजार हो गयी तब एक दिन एक बैल ने उसके पास आकर मनुष्य की भाषा में कहा :

''सत्यकाम !''

धर्म के साक्षात् स्वरूप वृषभ को इस प्रकार मनुष्य की भाषा में बोलते हुए देखकर सत्यकाम ने नम्रतापूर्वक कहा : ''भगवन् ! बोलिए, क्या आज्ञा है ?''

*जिसके जीवन में श्रद्धा, तितिक्षा, धैर्य एवं सेवा होती है उस पर कृपा करने के लिए तो देवता भी तैयार होते हैं।*

वृषभ ने कहा : ''वत्स ! हमारी संख्या एक हजार हो चुकी है। अब तुम हमें गुरुदेव के आश्रम में ले चलो। मैं तुम्हें ब्रह्म के एक पाद का उपदेश देता हूँ।''

सत्यकाम ने अत्यंत श्रद्धापूर्वक उस वृषभ से ब्रह्म के एक पाद का उपदेश ग्रहण किया।

वृषभ ने कहा : ''इसका नाम 'प्रकाशवान' है। अब आगे का उपदेश अग्निदेव करेंगे।''

दूसरे दिन प्रातःकाल में ही सत्यकाम गायों को लेकर गुरुदेव के आश्रम की ओर चल पड़ा। मार्ग में संध्या को गोधूलि बेला के समय उसने गायों को पानी पिलाकर रात्रि-विश्राम की व्यवस्था की एवं वन में से सूखी लकड़ियाँ बीनकर अग्नि प्रज्वलित की। उसके बाद पूर्व की ओर मुँह करके वह बैठ गया।

*''बेटा ! इन गायों को चराने के लिए वन में ले जा। जब तक इनकी संख्या एक हजार न हो जाये तब तक तू यहाँ वापस मत लौटना।''*

तब अग्नि की ज्वाला में से साक्षात् अग्निदेव प्रगट हुए एवं सत्यकाम को 'अनंतवान' नामक ब्रह्म के द्वितीय पाद का उपदेश देकर बोले :

''अब आगे का उपदेश हंसदेव करेंगे।''

सत्यकाम ने सारी रात उस उपदेश का मनन किया। दूसरे दिन सुबह पुनः गायों को लेकर वह आगे बढ़ा। संध्या के समय एक जलाशय के तट पर गायों के रात्रि-विश्राम की व्यवस्था कर, अग्नि प्रज्वलित करके सत्यकाम बैठा।

सत्यकाम जब अग्नि प्रगट करके बैठा था, उसी समय वहाँ एक हंस उड़ता-उड़ता आया एवं सत्यकाम के पास बैठ गया।

सत्यकाम को संबोधित करते हुए उस हंस ने 'ज्योतिष्वान्' नामक ब्रह्म के तृतीय पाद का उपदेश किया। 'इसके बाद का उपदेश जलमुर्ग के द्वारा मिलेगा' - ऐसा कहकर हंस उड़ गया।

उस रात्रि को भी सत्यकाम ने हंस के द्वारा दिये गये उपदेश का ठीक से मनन किया। प्रातःकाल गायों को लेकर वह आगे बढ़ चला। रात्रि के समय उसने एक वटवृक्ष के नीचे निवास किया। रात्रि को जब वह प्रज्वलित अग्नि के समक्ष बैठा था, तब वहाँ एक जलमुर्ग आया एवं उसने सत्यकाम को ब्रह्म के चतुर्थ पाद 'आयतनवान्' का उपदेश किया।

इस प्रकार गुरुसेवा एवं गौसेवा के प्रताप से वृषभ के रूप में आये हुए वायुदेवता, अग्निदेवता, हंसरूप में आये हुए

(शेष पृष्ठ १० पर)

# गौमाता : रोग-दोषनिवारिणी

**[गतांक का शेष]**

**पेट के कीड़े** : पेट के कीड़े तो आज कल सामान्य-सी बात हो गई है । इसके लिए कड़वी, कसैली दवा बार-बार खाने से आँतों की आंतरिक परत छिल जाती है। यदि गाय के दूध में शहद मिलाकर कुछ दिन लगातार पियें तो पुराने-से-पुराने कीड़े भी मर जाते हैं।

**चेहरे की कांति बढ़ाना** : एक कप पानी में २ चम्मच गाय का दूध मिलाकर रोज सुबह-शाम कांतिहीन तथा झाँईयुक्त चेहरे पर मलें । कुछ ही दिनों में झाँई हट जाएगी और चेहरा दमकने लगेगा। इसके लिए धारोष्ण दूध का प्रयोग सबसे लाभकारी होता है।

**नपुंसकता** : पीपल के पेड़ की छाल, फल, अंकुर और जड़ इन चारों को ५-५ ग्राम लेकर उसमें एक गिलास गाय का दूध और एक गिलास पानी मिलाकर गर्म करें। प्रवाही आधा रहने पर उसमें मिश्री मिलाकर पियें। छः माह में बहुत लाभ होता है।

**अम्लपित्त या एसीडिटी** : इस रोग में खट्टी डकार, पेट में जलन, उलटी आना, सिर चकराना, मुँह में खट्टा पानी भर आना आदि लक्षण प्रदर्शित होते हैं। एसीडिटीवाले रोगी को गाय के दूध में उतना ही पानी और थोड़ी-सी शक्कर मिलाकर सुबह, दोपहर व शाम को लस्सी बनाकर पीने को दें।

**कब्ज** : कब्ज तो आज कल सभी के लिए सामान्य-सा रोग है । इसमें भोजन न पचना, पेट फूलना, खुलकर शौच न आना तथा बाद में अम्लपित्त के लक्षण उत्पन्न होते हैं। कब्ज से ग्रस्त रोगी के लिए सोते समय गुनगुने दूध में १-२ चम्मच ईसबगोल की भूसी मिलाकर सेवन करना लाभकारी रहता है।

पुराने-से-पुराने कब्ज के लिए गाय के गुनगुने दूध में धीरे-धीरे गुड़वाली शक्कर मिलाते जायें तथा दूध को किसी चम्मच से हिलाते जायें । जितनी अधिक-से-अधिक शक्कर मिला सकें उतनी मिलाकर गुनगुना दूध पीकर रात्रि को सो जायें। सुबह ही खुलकर शौच होगा और कब्ज मिट जाएगा।

**तपेदक, क्षय या टी. बी.** : यद्यपि कुछ डॉक्टर तपेदक में दुग्ध को वर्जित मानते हैं परंतु २५० ग्राम गोदुग्ध में १० ग्राम पिपली पीसकर, छानकर तथा ५० ग्राम मिश्री मिलाकर उसमें २५० ग्राम पानी मिलायें। औंटाकर जब आधा रह जाये तब उतार लें । इसमें १० ग्राम गोघृत तथा २०-२५ ग्राम शहद मिलाकर दूध को इतना फेंटें कि उसमें खूब झाग बन जाये। रोगी झागों को ही धीरे-धीरे चूसे। ऐसा माना जाता है कि यदि फेफड़ों में छेद भी हो गया हो तो धीरे-धीरे ठीक हो जाता है।

**पंचमूल पय** : छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी तथा गोखरू- इसे क्षुद्र पंचमूल कहते हैं । इससे साधित दूध निम्न प्रकार बनाया जाता है :

क्षुद्र पंचमूल २० ग्राम, गोदुग्ध १६० ग्राम तथा पानी ६४० ग्राम, इन सबको मिलाकर पकायें। जब सारा पानी उड़ जाय और केवल दूध रह जाय तब ठंडा करके छान लें। इस दूध से सभी प्रकार के ज्वर, श्वास, खाँसी, सिरदर्द, कमरदर्द, जुकाम आदि में लाभ होता है।

**त्रिकंटकादि दूध** : गोखरूवाला मूल, छोटी कटेरी,

गुड़, सोंठ आदि से साधित दूध मलबन्ध (कब्ज) तथा मूत्रबन्ध को नष्ट करता है। सूजन तथा ज्वर को कम करता है। इसमें गुड़ को छोड़कर सभी दवाओं को मिलाकर दूध को साधित करें। बाद में छानकर गुड़ मिलाकर रोगी को दें।

**जिगर विकार** : जिगर विकार होने से पाचन-संस्थान में भी विकार उत्पन्न हो जाते हैं। गोदुग्ध में शहद मिलाकर कुछ दिन पीने से जिगर, तिल्ली तथा गुर्दे के विकारों में काफी लाभ होता है।

**कमजोर बच्चों के लिए** : अत्यधिक निर्बल, रोगी तथा सूखाग्रस्त बच्चों को गाय के थन से सीधे ही धार बच्चे के मुँह में डालें। प्रतिदिन दो-चार धार बच्चे के मुँह में डालने से बच्चे का स्वास्थ्य धीरे-धीरे ठीक होने लगेगा।

**निर्बल तथा रोगी** : व्यक्तियों को गाय के धारोष्ण दूध (तुरंत निकाला गया दूध) का झाग चाट-चाटकर धीरे-धीरे पीना चाहिए। इस प्रकार मात्र २० मिलिलिटर दूध पीने से ही एक लिटर दूध के बराबर लाभ मिलता है।

**चक्कर आना तथा प्यास लगना** : गोदुग्ध चक्कर आना, अधिक प्यास लगना, पुराना ज्वर, रक्त विकार आदि तकलीफों को दूर करता है तथा क्रोध को शांत करता है।

**आँख में चमक लगना या गर्मी के कारण आँख लाल होना** : वैल्डिंग की चमक से या गर्मी के दिनों में तेज धूप से कभी-कभी आँखों में चमक लग जाती है, आँखें लाल हो जाती हैं तथा दर्द करने लगती हैं। इसके निवारण के लिए गाय के दूध में फिटकरी डालकर उसे उबालें ताकि दूध फट जाय। फटे दूध का छैना साफ-स्वच्छ रूई के फाहे पर रख लें। उस छैने को फाहेसहित आँखों पर बाँधकर आराम से लेट जायें। आँखें बहुत जल्दी ठीक हो जाएँगी।

**दुग्ध वर्जित** : बासी दूध, ठंडा, खट्टा, दुर्गंधयुक्त, फटा, खराब रंग का दूध नहीं पीना चाहिए। कफ, खाँसी, अतिसार, श्वास और गैस के रोगी दूध का प्रयोग न करें। अगर करें तो बताई गई विधि और दवा के साथ ही प्रयोग करें।

## (2) गोघृत तथा मक्खन :

**मधुघृते प्राशयीत घृतं वा।**

**(पार. गृ. सूत्र : १.१६.८)**

इस सूत्र के अनुसार मधु और गोघृत में सुवर्ण घिसकर अथवा केवल गोघृत में सुवर्ण घिसकर बालक को सर्वप्रथम चटाया जाता है। उसके पश्चात् उसे गौ का दूध पिलाया जाता है।

गाय के दूध से बनाये जानेवाले पदार्थों में मक्खन, नवनीत तथा घी प्रमुख हैं। दूध से क्रीम निकालकर मक्खन तथा मक्खन से घी बनाया जाता है या दूध को जमाकर दही तथा दही को बिलोकर नवनीत और नवनीत से घी बनाया जाता है। मक्खन बलकारक, अग्निदीपक और ग्राही है। वात-पित्त, रक्तविकार, क्षय, बवासीर तथा खाँसी को नष्ट करता है। गोघृत कांति और स्मृतिदायक, बलकारक, मेध्य, पुष्टिकारक, वात-कफ-पित्तनाशक, श्रमनिवारक, अग्निदीपक, पाक में मधुर, शरीर को स्थिर रखनेवाला होता है। यह बहुत गुणोंवाला है और भाग्य से ही इसकी प्राप्ति होती है।

गौघृत विशेष रूप से नेत्रों के लिए उपयोगी है। थोड़े भारीपनवाला तथा कांति, बल, तेज, लावण्य, बुद्धि, स्वर की मधुरता, स्मरणशक्ति, मेधा और आयु को बढ़ानेवाला है तथा उदावर्त, ज्वर, उन्माद, शूल, आफरा, वर्णक्षय, विसर्प तथा रक्तविकारों का नाश करनेवाला है। नया घी आहार के लिए और पुराना घी औषधि के रूप में उपयोगी होता है। एक वर्ष बाद घी पुराना हो जाता है। तेल खाने से जहाँ एसीडिटी पैदा होती है वहीं घी पित्त का शमन करता है तथा एसीडिटी को समाप्त करता है। अधिकतर पाक जैसे एरण्ड पाक, हल्दी पाक तथा औषधीय घृतों में गोघृत का प्रयोग किया जाता है। (क्रमशः)

**महत्त्वपूर्ण निवेदन** : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ६७ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया मई तक अपना नया पता भिजवा दें।

# शरबत

बाजारू ठंडे पेय पदार्थों से स्वास्थ्य को कितनी हानि पहुँचती है यह तो लोग जानते ही नहीं हैं। दूषित तत्त्वों, गंदे पानी एवं अभक्ष्य पदार्थों के रासायनिक मिश्रण से तैयार किये गये अपवित्र बाजारू ठंडे पेय हमारी तंदुरुस्ती एवं पवित्रता पर प्रहार करते हैं। इसलिए उनका त्याग करके हमें आयुर्वेद एवं भारतीय संस्कृति में वर्णित पेय पदार्थों से ही ठंडक प्राप्त करनी चाहिए। यहाँ कुछ शरबतों की विधि एवं उपयोग की जानकारी दी जा रही है :

**१. गुलाब का शरबत** : गुलाबजल अथवा नलिकायंत्र द्वारा गुलाब की कलियों के निकाले गये अर्क में मिश्री डालकर उसका पाक तैयार करें। जब जरूरत पड़े तब उसमें ठंडा जल मिलाकर शरबत बना लें।

यह शरबत सुवासित होने के साथ ही शरीर की गर्मी को भी नष्ट करता है। अतः ग्रीष्म ऋतु में सेवन करने योग्य है।

**२. अनार का शरबत** : अच्छी तरह से पके हुए २० अनार के दाने निकालकर उसका रस निकाल लें। उस रस में अदरक डालकर रस गाढ़ा हो जाय तब तक उबालें। उसके बाद उसमें केसर एवं इलायची का चूर्ण मिलाकर शीशी में भर लें।

**मात्रा** : ढाई तोला।

**उपयोग** : रुचिकर एवं पित्तशामक होने की वजह से दवा के रूप में भी लिया जा सकता है एवं गर्मी में शरबत के रूप में पीने से गर्मी से राहत मिलती है।

**३. द्राक्ष का शरबत** : बीज निकाली हुई ५ तोला द्राक्ष को बिजौरे अथवा नींबू के रस में पीसें। उसमें अनार का २० तोला रस डालें। उसके बाद उसे छानकर उसमें स्वादानुसार काला नमक, इलायची, काली मिर्च, जीरा, दालचीनी एवं अजवाइन डालकर ५ तोला शहद मिलायें।

**मात्रा** : दो तोला।

**उपयोग** : मंदाग्नि एवं अरुचि में लाभप्रद।

**४. इमली का शरबत** : साफ एवं अच्छी क्वालिटी की १ किलो इमली लेकर एक पत्थर के बर्तन में २ किलो पानी में १२ घंटे भिगो दें। उसके बाद इमली को हाथ से खूब मसलकर पानी के साथ एकरस कर दें। फिर पानी को मिट्टी के बर्तन में छान लें। उस पानी को कलई किये हुए अथवा स्टील के बर्तन में डालकर उभार आने तक उबाल लें। फिर उसमें शक्कर डालकर तीन तार की चासनी कर लें। फिर काँच की बरनी में भर लें।

**मात्रा** : इस शरबत को २ से ५ तोला (२५ से ५० ग्राम) तक सेवन कर सकते हैं।

**उपयोग** : पित्त प्रकृतिवाले व्यक्ति को रात्रि में सोते समय देने से शौच साफ होगा।

गर्मी में सुबह पीने से लू लगने का भय नहीं रहता है।

कब्जियत के रोगी के लिए इसका सेवन लाभदायक है।

**५. पके हुए कैथे (कबीट) का शरबत** : यह भी इमली के शरबत की तरह ही बनाया जाता है।

**उपयोग** : यह शरबत शरीर की गर्मी में अत्यंत उपयोगी है। इसके अलावा पित्तशामक एवं रुचिकर भी है।

**६. नींबू का शरबत** : २० अच्छे एवं बड़े नींबू का रस निकालें। उस रस में ५०० ग्राम मिश्री डालकर गाढ़ा होने तक उबालें एवं शीशी में भरकर रख लें।

**मात्रा** : १ से २ तोला।

**उपयोग** : अरुचि, मंदाग्नि, उलटी, पित्त की वजह से दुखते सिर आदि में लाभदायक है।

इसके अलावा यह शरबत भूख उत्पन्न करता है एवं आहार के प्रति रुचि उत्पन्न करता है।

**७. कच्चे आम का शरबत (पना)** : कच्चे आम

को छीलकर पानी में उबालें। उसके बाद ठण्डे पानी में मसल-मसलकर रस बनाएँ। इस रस में स्वाद के अनुसार नमक, जीरा, शक्कर वगैरह डालकर पियें।

**उपयोग** : इस शरबत से गर्मी से राहत मिलती है। यह अपने देश के शीतल पेयों की प्राचीन परंपरा का एक नुस्खा है जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभदायक है।

स्वास्थ्यनाशक रोगों की खान जैसे, अपवित्र पदार्थों के मिश्रण से तैयार बाजारू शीतल पेय त्वचा एवं हाथों को हानि पहुँचाते हैं। ऐसे बोतल के पेयों से सावधान !

## बेदाना : एक अद्भुत औषधि

ग्रीष्म ऋतु जहाँ अनेक बीमारियों को साथ लाती है, वहीं इस ऋतु में शरीर तथा मन की शीतलता सभी लोग चाहते हैं। इस मौसम में हमारे स्वास्थ्य के लिए शीतल पेय पदार्थों की बड़ी आवश्यकता होती है। इसके लिए लोग पेप्सी, कोला आदि कोल्डड्रिंक्स का सेवन करते हैं, जो कि स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक हानिकारक होते हैं। इन पेय पदार्थों में कार्बन डाइऑक्साईड होने के कारण खुश्की, पेट की विभिन्न बीमारियाँ और अन्य कई रोग पैदा हो जाते हैं।

किन्तु हमारे ऋषियों की खोज अद्भुत है। वे हमारे तन-मन की रक्षा के लिए हमें ऐसी युक्तियाँ बताते हैं कि कुछ ही दिनों में उसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारे सामने आता है। ऐसा ही एक प्रयोग है बेदाना प्रयोग। यह एक वनस्पति का बीज है जो कि बाजार में बड़ी आसानी से उपलब्ध हो जाता है।

**विधि** : मिट्टी के बर्तन में थोड़ा पानी लेकर उसमें बेदाना डाल दें। बेदाना की मात्रा व्यक्तियों के हिसाब से निर्धारित करें। एक व्यक्ति को एक दिन में ५-७ ग्राम बेदाना का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार ५ से १० ग्राम प्रति व्यक्ति के हिसाब से रात को बेदाना भिगो दें। रातभर पानी में रखने के बाद सुबह उसे मथनी से खूब मथ लें। फिर एक साफ कपड़े से छानकर पुनः उसी मिट्टी के बर्तन में उसका रस निकाल लें। तत्पश्चात् उसमें आवश्यकतानुसार मिश्री अच्छी तरह से मिला लें। प्रातःकाल बिना कुछ भी खाये-पिये इसका उपयोग करें। इसके पश्चात् लगभग डेढ़ घण्टे तक कुछ खायें-पियें नहीं। एक सप्ताह तक लगातार इसका उपयोग करें। प्रयोगकाल के दौरान ही आपको इसका परिणाम प्रत्यक्ष दिखने लगेगा।

**लाभ** : शरीर को शीतल रखने का यह एक अद्भुत प्रयोग है। इसके उपयोग से शरीर की गर्मी शांत होती है। पेट की बीमारियाँ जैसे, कब्ज, अम्लपित्त आदि रोगों के लिए भी यह रामबाण है। यह औषधि कमजोरी तथा आलस्य को दूर कर शरीर में अद्भुत शक्ति का संचार करती है। इसका एक सप्ताह का प्रयोग पूरे गर्मी के मौसम में आपके शरीर को गर्मी के प्रकोप से बचाकर शीतलता प्रदान करता है।

पेय पदार्थों के रूप में बिकनेवाले जहर का प्रयोग बन्द करके आयुर्वेद के इस अनमोल रत्न का प्रयोग करके, आप स्वस्थ रह सकते हैं। हर प्रकार का व्यक्ति इसका सेवन कर सकता है। आपका शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न तथा वृत्ति शांत होने लगेगी एवं परमात्मा को पाकर आप परम स्वस्थ हो जायेंगे।

अंग्रेजी दवाइयों के कुप्रभाव से, Side Effect से किडनी और लीवर कमजोर हो जाते हैं और हृदय की अनेक बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। लेकिन इस प्राकृतिक औषधि 'बेदाना' के प्रयोग से किडनी और लीवर को लाभ होगा। पित्तदोष से होनेवाले अनेक छोटे-मोटे रोगों में, जैसे कि महिलाओं में गर्मी से होनेवाले रक्तस्राव आदि में इसके एक-दो दिन के प्रयोग से ही चमत्कारिक प्रभाव दिखाई देने लगता है। लीवर और किडनी के लिए तो यह 'बेदाना' आशीर्वादरूप है।

सारी बीमारियाँ, वात, पित्त और कफ- इन तीन दोषों से ही होती हैं। पित्त दोष से होनेवाली तमाम बीमारियों को यह 'बेदाना' नष्ट करता है। यकृत, गुर्दा और किडनी के रोग इससे मिटते हैं।

महिलाओं के मासिक धर्म के कारण रक्तस्राव, स्वप्नदोष, प्रदर आदि रोग जो कि तमाम दवाइयाँ करने से भी नहीं मिटते, वे सब इस 'बेदाना' के शीतल पेय से सात दिन में गायब होने लगते हैं। इसमें बहुत सारे गुण हैं लेकिन इसकी प्रकृति ठण्डी होने के कारण इसका प्रयोग सात दिन ही करना चाहिए। शरीर यदि

अनुकूल रहे तो ज्यादा दिन भी ले सकते हैं। ज्यादा दिन इसका प्रयोग करनेवालों को मंदाग्नि की संभावना हो सकती है, इसलिए भोजन से पूर्व इन लोगों को अदरक, नमक और नींबू मिलाकर अवश्य खाना चाहिए।

इस निर्दोष वनस्पति का अंग्रेजी दवाइयों की तरह कोई 'साइड इफेक्ट' या 'रिएक्शन' नहीं होता है। आयुर्वैदिक पद्धति में जिस प्रकार की व्यवस्था है, उसी प्रकार का यह आयुर्वैदिक रोगनाशक टॉनिक है।

अभी हाल ही में पूज्य बापूजी को फालसी मलेरिया जिसे हम जहरी (जानलेवा) बुखार भी कह सकते हैं, हो गया था लेकिन रोग का पता न लगने के कारण डॉक्टर अन्य उपचार करते रहे और बाद में सही रोग का पता चलने पर जब सही उपचार किया तो रोग ठीक हो गया। अंग्रेजी दवाइयों के कुप्रभाव ने लीवर और किडनी को बुरी तरह से क्षीण कर दिया। पीलिया तो मंत्र-विधि से मिट गया लेकिन किडनी और लीवर को ठीक करने के लिए पूज्य बापूजी ने 'बेदाना' का प्रयोग किया जिसके प्रभाव से उन्हें चमत्कारिक ढंग से स्वास्थ्य-लाभ हुआ।

इस 'बेदाना' का लाभ आप सब लोग लें, इसलिये यह लेख लिखा जा रहा है। पूज्यश्री के लिए यह 'बेदाना' हजार रूपये प्रति किलो के हिसाब से ५० ग्राम लाया गया था। पूज्य बापूजी की अन्तरात्मा ने देखा कि यह बहुत फायदेवाली चीज है लेकिन इतनी महँगी होने के कारण सब लोग इसका लाभ कैसे ले पायेंगे ? तब उन्होंने ठीक से जाँच करवायी तो बाजार में इसका दाम हजार रूपये प्रति किलोग्राम से घटकर क्रमशः ६००, ४५०, ४०० और ३७५ रूपये प्रति किलोग्राम तक पाया गया। और अधिक जाँच करने पर पाया कि यह २५० रूपये प्रति किलोग्राम के हिसाब से भी बाजार में उपलब्ध है।

*

# अंग्रेजी दवाइयों से सावधान !

सावधान ! आप जो जहरीली अंग्रेजी दवाइयाँ खा रहे हैं उनके परिणाम का भी जरा विचार कर लें।

'वर्ल्ड हेल्थ आर्गेनाइजेशन' ने भारत सरकार को ७२,००० के लगभग दवाइयों के नाम लिखकर उन पर प्रतिबन्ध लगाने का अनुरोध किया है। क्यों ? क्योंकि ये जहरीली दवाइयाँ व्यक्तियों के पेट में जाने से लम्बे अन्तराल पर यकृत (लीवर), गुर्दे और आँतों को नुकसान करके अंत में घातक बनती हैं।

कुछ वर्ष पहले न्यायाधीश हाथी साहब की राहबरी के नीचे एक कमीशन बनाया गया था यह जाँच करने के लिए कि इस देश में कितनी दवाइयाँ जरूरी हैं और कितनी बिनजरूरी हैं जिन्हें कि विदेशी कम्पनियाँ केवल मुनाफा कमाने के लिए ही बेच रही हैं। फिर उन्होंने सरकार को जो रिपोर्ट दी, उसमें केवल ११७ दवाइयाँ ही जरूरी थीं और ८४०० दवाइयाँ बिल्कुल बिनजरूरी थीं। उन्हें विदेशी कम्पनियाँ भारत में मुनाफा कमाने के लिए ही बेच रही थीं और अपने ही देश के कुछ डॉक्टर लोभवश इस षडयंत्र में सहयोग कर रहे थे।

जो दवाइयाँ अमेरिका व यूरोप आदि देशों में जहर घोषित करके प्रतिबंधित की गई हैं वे ही दवाइयाँ भारत में बिना किसी रोक-टोक के बेची जा रही हैं।

'पैरासिटामोल' नामक दवाई जो कि बुखार को तुरन्त दूर करने के लिए या कम करने के लिए सब लोग प्रयोग कर रहे हैं वही दवाई जापान में 'पोलियो' का कारण घोषित करके प्रतिबंधित कर दी गई है। उसके बावजूद भी प्रजा का प्रतिनिधित्व करनेवाली सरकार प्रजा का हित न देखते हुए शायद केवल अपना ही हित देख रही है।

सरकार कुछ करे या न करे लेकिन आपको अगर पूर्ण रूप से स्वस्थ रहना है तो आप इन जहरीली दवाइयों का प्रयोग बन्द करें और करवाएँ। भारतीय संस्कृति ने जो हमें आयुर्वेद के द्वारा निर्दोष औषधियाँ भेंट की हैं उन्हें आप अपनाएँ।

साथ ही आपको यह भी ज्ञान होना चाहिए कि शक्ति की दवाइयों के रूप में आपको मांस, प्राणियों का रक्त, मच्छी आदि खिलाये जा रहे हैं जिसके कारण आपका मन मलिन होता है और संकल्पशक्ति कम होने के कारण साधना में बरकत नहीं होती है। इससे

आपका जीवन खोखला हो जाता है। एक संशोधनकर्त्ता ने बताया कि 'ब्रेफेन' नामक दवा जो आप लोग दर्द को शांत करने के लिए खा रहे हैं उसकी केवल १ मिलिग्राम मात्रा पर्याप्त है, फिर भी आपको २५० मिलिग्राम या इससे डबल मात्रा दी जाती है। यह अमेरिकन मात्रा आपके यकृत और गुर्दे को बहुत हानि पहुँचाती है। 'साइड इफेक्ट' का शिकार होते हैं वह अलग।

## ताड़ासन का चमत्कारिक प्रयोग

वीर्यस्राव क्यों होता है ? जब पेट में दबाव (Intro-abdominal pressure) बढ़ता है तब वीर्यस्राव होता है। इस 'प्रेशर' के बढ़ने के कारण इस प्रकार हैं :

(१) ठूँस-ठूँसकर खाना (२) बार-बार खाना (३) कब्जियत (४) गैस होने पर (वायु करे ऐसी आलू, गवारफली, भींडी, तली हुई चीजों का सेवन एवं अधिक भोजन के कारण) (५) सेक्स संबंधी विचार, चलचित्र एवं पत्रिकाओं से।

इस प्रेशर के बढ़ने से प्राण नीचे के केन्द्रों में, नाभि से नीचे मूलाधार केन्द्र में आ जाता है जिसकी वजह से वीर्यस्राव हो जाता है। इस प्रकार के प्रेशर के कारण हार्निया की बीमारी भी हो जाती है।

ताड़ासन करने से प्राण ऊपर के केन्द्रों में चले जाते हैं जिससे तुरंत ही पुरुषों के वीर्यस्राव एवं स्त्रियों के प्रदर रोग की तकलीफ में लाभ होता है।

**ताड़ासन की विधि :** सर्वप्रथम एकदम सीधे खड़े रहें। हाथ ऊँचे रखकर फिर पैरों के पंजों पर खड़े रहें एवं दृष्टि थोड़ी ऊपर की ओर रखें। ऐसा दिन में तीन बार (सुबह, दोपहर, शाम) ५-१० मिनट तक करें।

यदि पैरों के पंजों पर खड़े न रह सकें तो जैसे अनुकूल हो वैसे खड़े रहकर भी यह आसन किया जा सकता है।

यह आसन बैठे-बैठे भी किया जा सकता है। जब भी सेक्स संबंधी विचार आयें तब हाथ ऊँचे करके दृष्टि ऊपर की ओर करनी चाहिए।

*

मुख्य मंत्री
जयपुर, राजस्थान।
१० अप्रैल, १९९८.

## संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद द्वारा मासिक पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' का नियमित प्रकाशन किया जा रहा है।

हमारे आप्त ग्रंथों में निहित ज्ञान से ओत-प्रोत ऋषि-मुनियों की वाणी सदैव ही प्रेरणादायी रही है। ऐसे प्रवचनों को नियमित पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित करना एक पुनीत कार्य है। यह सराहनीय है कि संत श्री आसारामजी बापू के अध्यात्मिक प्रवचन एवं हमारे ग्रंथों में निहित ज्ञान को निरन्तर आठ वर्ष से आश्रम द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है।

मुझे विश्वास है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सामग्री लोगों में अध्यात्म दर्शन के प्रति आस्था उत्पन्न करने की दृष्टि से प्रेरणादायी होगी।

(हस्ताक्षर)
भैरोसिंह शेखावत

**सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना**

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी तरह की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें। (२) **'ऋषि प्रसाद'** के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

# भगवान मेरे तुम ही केवल...

भगवान मेरे तुम ही केवल,
जीवन का एक सहारा हो।
मैं भवसागर में डूब रहा,
तुम ही बस मेरा किनारा हो॥
मुझे अच्छे-बुरे का ज्ञान नहीं,
अध्यात्मिकता की पहचान नहीं।
जीवन-पथ का भी ध्यान नहीं,
ईश्वर की भी पहचान नहीं॥
मेरे मात-पिता ईश्वर तुम ही,
भव बन्ध छुड़ानेवाले हो।
भगवान मेरे तुम...
मुझे अपनी शरण में लेकर तुम,
भवसागर पार करा देना।
मैं जैसा भी हूँ तेरा हूँ,
मुझ पर रहमत बरसा देना॥
करुणामयी दृष्टि का सम्बल,
अब मेरा प्राण आधार है।
गीता का ज्ञान सिखाकर तुम,
मोह-माया छुड़ानेवाले हो॥
भगवान मेरे तुम...
मैं भटका हुआ एक राही हूँ,
मुझे ज्ञान का मार्ग बता देना।
मेरे जीवन के लिए जो शुभ हो,
वैसी ही राह दिखा देना॥
मुझ पर इतना उपकार करो,
निज चरणों की भक्ति का दान करो।
रहमत की नजर बरसा करके,
मेरी नैया पार लगा देना॥
भगवान मेरे तुम...

*- गौरीशंकर रामस्वरूप शर्मा*
*किशनगढ़, अजमेर (राज.)*

*

# किससे माँगूँ?

किसी राजा की सवारी निकल रही थी। मार्ग में एक वृक्ष के नीचे एक अलमस्त फकीर अपनी मस्ती में लेटे हुए थे। धर्मात्मा राजा समझदार और श्रद्धालु था। फकीर पर नजर पड़ते ही सवारी छोड़कर उतर पड़ा और अकेला ही फकीर के पास गया। फकीर को प्रणाम करते हुए राजा ने कहा : ''आपको कुछ आवश्यकता हो तो माँग लीजिए।''

फकीर : ''तू अच्छा आया ! ये मक्खियाँ बड़ी तंग कर रही हैं। इन्हें भगा दे यहाँसे।''

राजा : ''मक्खियाँ तो मेरे वश में नहीं हैं किन्तु आप अगर साथ में चलें तो आपको ऐसा स्थान दिया जा सकता है जहाँ मक्खियाँ...''

इतना सुनकर बीच में ही फकीर बोल उठे : ''बस बस, तू जा। अपना काम कर। मैं किससे माँगूँ? तुच्छ मक्खियों पर भी जिसका अधिकार नहीं है, उससे ?''

राजा समझ गया और नतमस्तक होकर चला गया।

सच ही तो है। सारा ब्रह्माण्ड जिसकी सत्ता से चलता है उस परम सत्ताधीश परमात्मा को पाये हुए महापुरुष क्या माँगें, किससे माँगें ?

*

*मनुष्य को कभी हताश नहीं होना चाहिए। आपको अध्यात्मिक राह को रोशन करनेवाले राहबर मिले हैं, साधना का उत्तम वातावरण मिल रहा है तथा सत्संग से जीवन जीने का ढंग सिखाया जा रहा है। इन तमाम बातों को आत्मसात् करने के लिए श्रद्धा-भक्ति और बुद्धि भी है तो जितना हो सके, अधिक से अधिक चल लेना चाहिए। किसी भी दुःख से, किसी भी परिस्थितियों से रुकना नहीं चाहिए।*

**सहारनपुर :** सहारनपुर में दिनांक : १९ से २३ मार्च तक आयोजित सत्संग समारोह में पूज्यश्री के सुपुत्र श्री नारायण स्वामी ने बहायी भक्ति, ज्ञान एवं प्रेम की सरिता जिसमें अवगाहन करते हुए सहारनपुरवासी कृतकृत्य हो उठे एवं उनके आनंद की सीमा ही न रही। पूज्यपाद सद्गुरुदेव पूर्ण स्वस्थ न होते हुए भी, शरीर की परवाह न करते हुए भी भक्तों के हृदय की पुकार को सुनकर पूर्णाहुति के लिए स्वयं सहारनपुर पहुँच गये। अपने बीच अपने लाड़ले सद्गुरुदेव को पाकर वहाँ की जनता भावविभोर हो उठी।

**अमदावाद आश्रम :** भगवान झुलेलाल का प्रागट्य दिवस अर्थात् चेटीचंड महोत्सव। दिनांक : २९ मार्च '९८ को पूज्य बापू के सुपुत्र एवं सत्शिष्य पूज्य नारायण स्वामी के सान्निध्य में चेटीचंड महोत्सव अत्यंत आनंद एवं उल्लास के साथ अमदावाद आश्रम में मनाया गया।

चेटीचंड पर्व की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए पूज्य नारायण स्वामी ने कहा : **''जितने भी पर्व एवं जयंतियाँ हैं उनको मनाने के पीछे हमारे ऋषि-मुनियों का दीर्घ दृष्टिकोण रहा है। जो पर्व एवं उत्सव मनाये जाते हैं वे खुशी एवं उल्लास के साथ मनाए जाते हैं एवं जो जयंतियाँ मनाई जाती हैं वे महामानवों से प्रेरणा लेने के लिए मनाई जाती हैं। आज नया वर्ष है एवं चेटीचंड का पावन दिवस भी। आज के दिन उन दिव्य पुरुष, अवतारस्वरूप भगवान झुलेलाल के पावन चरित्र का स्मरण करके हम लोग भी धर्म के रास्ते पर चलें एवं बुराई का परित्याग करें, चेटीचंड का महोत्सव यही संदेश लेकर आता है।''**

इस पावन अवसर पर विभिन्न स्थलों से साज-सामान के साथ नृत्यगान करते हुए भगवान झुलेलाल की दिव्य झाँकियाँ आश्रम के प्रांगण में एकत्रित हुई थीं। दिनांक : ३० मार्च '९८ को भी अमदावाद आश्रम में पूज्य नारायण स्वामी के दिव्य सत्संग का लाभ भाविक जनता को मिला।

**हरिद्वार :** महाकुम्भ के अवसर पर संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा आयोजित प्रथम ध्यान योग साधना शिविर का शुभारंभ दिनांक : २६ मार्च '९८ को हरिद्वार में सप्तर्षि चुंगी नाका के पास २५ एकड़ भूमि पर निर्मित 'संत श्री आसारामजी नगर' के विशाल परिसर में हुआ। प्रथम तीन दिन पूज्य बापू के सुपुत्र श्री नारायण स्वामीजी के दिव्य सत्संग-प्रवचनों एवं जप, प्राणायाम तथा ध्यान के व्यावहारिक प्रयोगों का लाभ उपस्थित भक्तों को मिला।

दिनांक : २९ मार्च '९८ से स्वयं पूज्य गुरुदेव ने हजारों की संख्या में उपस्थित श्रद्धालुओं को अपनी पीयूषवर्षी वाणी से परितृप्त करते हुए कहा :

**''सत्यस्वरूप, सौन्दर्यस्वरूप और आनंदस्वरूप हरि का चिंतन करने से हमारा हृदय ही हरिद्वार हो जाता है। हमारी आत्मा ही सच्चा हरिद्वार है। जिस प्रकार हरिद्वार की गंगा में डुबकी लगाने से तन की थकान और मैल दूर हो जाते हैं, वैसे ही आत्मस्वरूप हरि में गोता लगाने से हमारे मन की थकान और मैल दूर हो जाते हैं।''**

इस ध्यान योग शिविर की पूर्णाहुति पूज्य बापू द्वारा दिनांक : ३० मार्च '९८ को हुई।

भक्तों की प्रार्थना एवं सत्संग की प्रबल जिज्ञासा को देखकर द्वितीय एवं तृतीय ध्यान योग साधना शिविर एवं महाकुंभ सत्संग समारोह का भी आयोजन किया गया।

द्वितीय ध्यान योग साधना शिविर का आयोजन दिनांक : २ से ५ अप्रैल '९८ तक हुआ एवं तृतीय ध्यान योग साधना शिविर का आयोजन दिनांक :

७ से १० अप्रैल तक हुआ जिसमें पूज्य नारायण स्वामी एवं श्री सुरेशानंदजी के सत्संग-प्रवचन होते थे। प्रतिदिन संध्या के समय एवं कभी-कभी दोपहर को भी पूज्यश्री पधारकर उपस्थित विशाल जनसमूह को अपनी दिव्य सत्संग-गंगा में सराबोर कर देते थे।

सारा कुंभमेला ही मानो 'संत श्री आसारामजी नगर' में उमड़ पड़ा था ! यहाँ पर पूज्य बापू द्वारा गूढ़ अध्यात्मिक तत्त्व को बड़ी सरल एवं स्पष्ट शैली में परोसा जा रहा था और सभी जिज्ञासु उससे छक-छककर तृप्त हुए जा रहे थे । गूढ़ वेदान्त दर्शन को पूज्यश्री इतनी सरलता से समझाते कि सामान्य जन तक के लिए भी वह सुग्राह्य हो उठता था। धीर-गंभीर सत्संग... 'मधुर मधुर नाम... हरि हरि ॐ...' की धुन... संतों का जमघट एवं पूज्यश्री की उपस्थिति... फिर बाकी क्या रहे ? कुंभ वास्तव में महाकुंभ होता जा रहा था । देवताओं का अमृत तो चार बार छलका था किंतु यहाँ तो प्रतिदिन अध्यात्मिक अमृत छलक रहा है... '

दिनांक : ११ से १४ अप्रैल '९८ तक जाहिर सत्संग का आयोजन हुआ, जिसमें प्रतिदिन पूज्यश्री स्वयं कभी दो बार तो कभी तीन बार पधारकर उपस्थित जनता को सत्संगामृत का पान कराते थे।

दिनांक : ११ अप्रैल को देश-विदेश से आये हुए हजारों पूनमव्रतधारियों ने पूज्यश्री के दर्शन करके ही अन्न-जल ग्रहण करने का व्रत पूर्ण किया। इतना ही नहीं वरन् माँ भागीरथी में पूज्यश्री के साथ गोता मारकर स्नान भी किया। यह स्नान तो ब्रह्मस्नान की ही खबर दे रहा था।

दिनांक : १४ अप्रैल अर्थात् शाहीस्नान का दिवस। यह दिवस कुंभपर्व का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण दिवस होता है। इस दिन सभी भक्तगण प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व ही गंगातट पर एकत्रित होकर पलकें बिछाये अपने लाड़ले सद्गुरुदेव की प्रतीक्षा कर रहे थे। जैसे ही पूज्यश्री का आगमन हुआ 'हरि ॐ' की धुन से पूरा गगनमण्डल गूँज उठा। माँ गंगा की गोद में बने, पुष्पों से आच्छादित मंच पर पूज्यश्री के विराजमान होते ही भक्तसमूह भावविभोर हो उठा। फिर भी दूर खड़े भक्तों के मन के भावों को जानते हुए स्वयं पूज्यश्री कुछ तैरकर तो कुछ नौका के द्वारा सभी भक्तों के बीच से गुजरे ताकि सभी साधक अपने सद्गुरुदेव का निकट से जी भरकर दर्शन कर सकें।

फिर शुरू हुआ शाहीस्नान का सिलसिला... मानो, काफी देर से प्रतीक्षारत माँ जाह्नवी की अभिलाषा पूर्ण हो रही थी । माँ गंगा की उछलती तरंगें मानो यह सूचित कर रही थी कि 'आज तो मैं भी पावन हुई...' पूज्यश्री के साथ हजारों भक्तों ने गंगा में डुबकी लगाई । फिर जल में खड़े-खड़े ही पूज्यश्री ने सभी से अपनी आसक्तियों के त्याग एवं भगवद् प्रीति में वृद्धि करने का संकल्प करवाया।

अद्भुत था यह दृश्य ! शाहीस्नान का दिवस... गंगा का सुरम्य तट... हजारों की संख्या में श्रद्धालु... 'हरि ॐ' की धुन एवं सबसे बढ़कर तो अगम-निगम के औलिया पूज्य बापू का सान्निध्य... एक दूसरे पर जल उछालते हुए साधक... ऐसा लग रहा था कि हजारों फुहारे एक साथ चल रहे हों । लेखनी क्या बयान करे ? उसकी तो अपनी सीमा है। यह तो वही समझ सकता है, जिसने स्वयं उसका अनुभव किया हो।

शाहीस्नान के बाद सभी चल पड़े 'संत श्री आसारामजी नगर' की ओर, जहाँ उन्हें गंगास्नान के बाद पूज्यश्री के मुखारविंद से निःसृत ब्रह्मविद्या-रूपी गंगा में भी कुछ गोते मारने का अनुपम लाभ मिलनेवाला था...

इस तरह 'संत श्री आसारामजी नगर' में दिव्य आनंद एवं उल्लास के साथ महाकुंभ पर्व सत्संग समारोह संपन्न हुआ । यहाँ देश-विदेश से आनेवाले हजारों साधकों के लिए व्यापक व्यवस्था की गयी थी । लगभग डेढ़ लाख व्यक्तियों के एक साथ बैठने के लिए विशाल पण्डाल ! वह भी बाद में छोटा पड़ने लगा था। शिविरार्थियों के ठहरने के लिए आवास, प्रतिदिन दर्शनार्थियों और

शिविरार्थियों के भोजन की व्यवस्था, अमानती सामान घर, सुरक्षा, सफाई, प्राथमिक चिकित्सा आदि की पूरी व्यवस्था की गयी थी। मुख्य द्वार के दाहिनी ओर जलपान, किफायती भाव पर फल एवं जीवनोपयोगी वस्तुओं के स्टॉल एवं प्याऊ लगी हुई थी। परिसर के मुख्य द्वार पर मंदिर के आकार का भव्य द्वार एवं परिसर के ही अंदर समुद्रमंथन के दृश्य की एक प्रदर्शनी थी जिसमें १७० फूट का शेषनाग बनाया गया था। यह प्रदर्शनी विशेष आकर्षण का केन्द्र रही।

शताब्दी के अंतिम महाकुंभ में अनेकों संतों-मण्डलेश्वरों के अलावा सुप्रसिद्ध रामायण कथाकार श्री मोरारी बापू भी पधारे थे। उपस्थित भक्तों एवं श्रद्धालुओं ने संतों के श्रीमुख से पूज्य सद्गुरुदेव की परदुःखकातरता, सहृदयता, समाजसेवा, निःस्वार्थ करुणा, संतस्नेह एवं निर्दोष बालसुलभ प्रेम आदि की महिमा को सुनकर आनंद, संतोष एवं विश्वास का अनुभव किया।

भक्तों के अत्यंत आग्रह को देखते हुए पूज्यश्री ने २५ से २८ अप्रैल तक इसी नगर में पुनः शिविर क आयोजन करने की स्वीकृति प्रदान कर दी।

**गाजियाबाद :** गाजियाबाद में दिनांक : १६ एवं १७ अप्रैल को पूज्य श्री नारायण स्वामी के दिव्य सत्संग समारोह के पश्चात् दिनांक : १८, १९ एवं २० अप्रैल को पूज्यश्री के जन्मोत्सव एवं सत्संग कार्यक्रम का आयोजन किया गया। यहाँ दिनांक : १८ अप्रैल को पूज्यश्री का ५७ वाँ जन्मदिवस बड़े धूमधाम से मनाया गया। पंजाब के मुख्यमंत्री श्री प्रकाशसिंह बादल की धर्मपत्नी एवं पुत्री ने तथा छिन्दवाड़ा से निर्वाचित सांसद कमलनाथ राय ने भी यहाँ पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का लाभ लिया। इसके अलावा हजारों की संख्या में जनता ने पूज्यश्री के मुखारविंद से निःसृत पावन गंगा में अवगाहन कर कृतार्थता का अनुभव किया।

**पानीपत :** एक दिन के लिए ही सही, पर भक्तों के भावों का मान रखते हुए पूज्यश्री यहाँ पधारे एवं यहाँ की भाविक जनता की अभिलाषा को पूर्ण करते हुए उन्हें सत्संग-अमृत का पान कराया।

यहाँ से पूज्यश्री महाकुंभ की पूर्णाहुति करने पुनः हरिद्वार पधारे।

'हरिद्वार' यानी 'महाकुंभ' और 'महाकुंभ' यानी 'संत श्री आसारामजी नगर। समग्र कुंभमेले के परिसर में एवं हरिद्वार नगर की गली-गली में एक ही बात सुनाई दे रही थी कि हरिद्वार कुंभमेले में देखने जैसा, मुलाकात लेने जैसा, अनुपम शांति देनेवाला अगर कोई धाम हो तो वह है 'संत श्री आसारामजी नगर।'

सप्त ऋषि चुंगी नाका के पास २५ एकड़ भूमि पर विस्तरित एवं स्वयंसेवकों के सख्त परिश्रम तथा सेवा-भावना के चमत्कारस्वरूप यह 'संत श्री आसारामजी नगर' अभी ध्यान, भक्ति एवं योग के चमत्कार से लाखों लोगों के हृदयों को आकर्षित कर रहा है।

*

**गंगाजी के पावन तट पर सद्‌गुरुदेव पधारे हैं ।**
**भवसागर से पार लगाने साँई आसारामजी आये हैं ।।**
हरिद्वार कुंभ मेले में पूज्यश्री हजारों भक्तों के साथ ।

## पूज्यश्री के ५७ वें जन्मोत्सव के निमित्त सत्संग का आयोजन कर गाजियाबाद समिति ने खुशियाँ मनायीं उस पावन बेला की झलकियाँ :

**शीश चढ़ाकर केशर तिलक, करते हैं वंदन। ५७ वें अवतरण दिन पर, गुरुदेव कोटि अभिनंदन॥**
पूज्य बापू के सुपुत्र पूज्य श्री नारायण स्वामी गुरुदेव का पूजन करते हुए।

**जन्मोत्सव के अनुपम क्षण पर गुरु दे दो ऐसा वरदान। जनम जनम के भटके जीव का हो जाय पूरण कल्याण॥**
(नृत्य एवं गीत के साथ गुरुदेव का अभिवादन करते हुए कवि पंकज जसवानी एवं स्कूल की बालिकाएँ)

**मन के मंदिर में गुरुजी, ज्ञानदीप जगा देना। जगमग ज्योति सदा जगे, भेद भरम मिटा देना॥**
गाजियाबाद समिति का साधकवृंद एवं हजारों भक्त।

REGISTRED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABD PSO LICENCE NO. 207 Regd. No. GAMC/1132. BOMBAY, BYCULLA PSO LICENCE NO. 03 Regd. No. MH/MNV-02.